अक्तूबर 2023

दादावाणी

Retail Price ₹ 20

ज्ञान मिलने के बाद भूलें किस माध्यम से दिखने लगती हैं?
प्रज्ञाशक्ति से। आत्मा में से जो प्रज्ञाशक्ति प्रकट हुई है,
उससे सभी भूलें दिखने लगती हैं और
वे भूलें दिखाई देने लगती हैं हमें इसलिए
तुरंत हम हल ला देते हैं।
हम कहते हैं कि 'भाई, प्रतिक्रमण करो'।

अडालज : नये वात्सल्य का उद्घाटन : ता. 15 अगस्ट 2023

पूणे : सत्संग - ज्ञानविधि : ता. 18-20 अगस्त

रायपुर : सत्संग - ज्ञानविधि : ता. 22-24 अगस्त

वर्ष : 18 अंक : 12
अखंड क्रमांक : 216
अक्तूबर 2023
पृष्ठ - 28

Editor : Dimple Mehta
© 2023
Dada Bhagwan Foundation
All Rights Reserved.
Printed & Published by
Dimple Mehta on behalf of
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Owned by
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

Printed at
Amba Multiprint
Opp. H B Kapadiya New High School, At-Chhatral, Tal: Kalol, Dist. Gandhinagar - 382729

Published at
Mahavideh Foundation
Simandhar City, Adalaj,
Dist.-Gandhinagar - 382421

संपर्क सूत्र :
त्रिमंदिर, सीमंधर सिटी,
अहमदावाद-कलोल हाइ-वे,
पो.ओ.: **अडालज**,
जि.: गांधीनगर-382421.
फोन : 9328661166-77
email: dadavani@dadabhagwan.org
www.dadabhagwan.org
दादावाणी संबंधी शिकायत के लिए:
+91 8155007500

सबस्क्रिप्शन (सदस्यता शुल्क)
5 साल
भारत : 1000 रुपये
वार्षिक
भारत : 200 रुपये
भारत में D.D./M.O.
'महाविदेह फाउन्डेशन' के नाम से संपर्कसूत्र के पते पर भेजें।

दादावाणी

मोक्षमार्ग में प्रज्ञा की सिर्फ ज्ञानक्रिया

संपादकीय

इस काल का आश्चर्य है कि अक्रम विज्ञान उदय में आया। ज्ञानी पुरुष की कृपा से स्वरूप का ज्ञान मिलते ही 'खुद' 'अपने' स्वरूप के भान में आता है तब अज्ञाशक्ति विदाई लेती है और प्रज्ञाशक्ति प्रकट होती है। यह ज्ञान मिलने से आत्मा के अनुभव-*लक्ष*-प्रतीति शुरू हुए, तभी से आत्मा की प्रतिनिधि के रूप में प्रज्ञाशक्ति कार्यरत रहती है।

प्रज्ञा वह ज्ञान का स्वरूप ही है। प्रज्ञा की सभी क्रियाएँ ज्ञानक्रियाएँ हैं। प्रज्ञा का ज्ञानप्रकाश सबसे पहले तो महात्माओं को अपनी एक-एक भूल दिखाता है, उन भूलों के सामने चेतावनी देता है। जैसे-जैसे भूलें समझ में आती हैं, वैसे-वैसे अद्‌भुत शक्ति उत्पन्न होती हैं। इन भूलों के प्रतिक्रमण भी प्रज्ञाशक्ति चंदू के पास करवाती है। अक्रम में सामायिक में देखने वाला कौन है? प्रज्ञा। प्रकृति की *अटकण* (जो बंधनरूप हो जाए) में से छूटने के लिए सामायिक भी प्रज्ञा करवाती है। प्रज्ञा और शुद्ध चित्त दोनों मिलकर ज़बरदस्त काम करते हैं, वे भीतर कुरेद-कुरेदकर पुराने दोषों को ढूँढ निकालते हैं। हम जो ज्ञानी पुरुष का निदिध्यासन करते हैं, उस निदिध्यासन में देखने वाली भी प्रज्ञाशक्ति है।

परम पूज्य दादाश्री कहते थे कि, यदि मोक्ष में जाना हो तो प्रज्ञा के प्रति सिन्सियर रहना चाहिए। डिस्चार्ज कर्मों का उदय दूसरी तरफ खींच ले जाए तब भी आपको इस तरफ का ज़ोर लगाना है। तब तक तप करना पड़ेगा। जब तक तप है, तब तक प्रज्ञा है, जो रियल-रिलेटिव को अलग करके आत्मानुभव की श्रेणियाँ चढ़ाती रहती है। प्रज्ञा को 'रिलेटिव-रियल' कहा है, परंतु मूल वह रियल की शक्ति है। जब केवलज्ञान होता है, तब उसका काम पूर्ण हो जाता है, तब वह वापस आत्मा में मिल जाती है।

ज्ञान लेने के बाद महात्मा, पुरुष (आत्मा) हो गए हैं। अब, पुरुष को पुरुषार्थ किसका करना है? ये आज्ञा पालन करने का पुरुषार्थ, पराक्रम। पुरुषार्थ का गुण आत्मा में नहीं है, वह प्रज्ञाशक्ति का धर्म है। इसलिए जब हम निश्चय करते हैं कि मुझे इस पुरुषार्थ में ही रहना है, तो प्रज्ञा उसमें हमारी मदद अवश्य करती है। सिर्फ अपना निश्चयबल चाहिए। हालाँकि, आज्ञा पालन करने का निश्चय भी प्रज्ञा ही करवाती है। ये पाँच आज्ञाएँ, वे सभी शास्त्रों का अर्क है। प्रज्ञाशक्ति इन पाँच आज्ञा को पकड़ ले, ऐसी है। जितनी आज्ञा पालन करेंगे उतनी प्रज्ञा खिलती जाएगी और उतना पुरुषार्थ-पराक्रम सहज होता रहेगा।

यह 'अक्रम विज्ञान', वह चैतन्य विज्ञान है। आत्मानुभूति के लिए ज्ञान ही इटसेल्फ काम करता रहेगा। आत्मा थर्मामीटर जैसा है, इसलिए भीतर का सबकुछ पता चलता है। अब थर्मामीटर में बताने वाली अपनी प्रज्ञाशक्ति हमें सचेत करके संसार छुड़वाती है और केवलज्ञान होने तक पूर्णाहुति करा देती है। अब, हमें प्रज्ञा की चेतावनी के सामने जाग्रत रहकर, आज्ञा का आराधन करके, दादा की कृपा प्राप्त करके, इसी देह में स्वसत्ता का अनुभव करके मोक्ष का काम निकाल लें, यही हृदयपूर्वक अभ्यर्थना।

- जय सच्चिदानंद

मोक्षमार्ग में प्रज्ञा की सिर्फ ज्ञानक्रिया

'दादावाणी' सामायिक में मुद्रित पाठ्य सामग्री मूलत: गुजराती 'दादावाणी' का हिन्दी रूपांतर है। कोष्ठक में दिए गए शब्द या तो अंग्रेज़ी शब्द का अर्थ हैं अथवा शब्द का तात्पर्य स्पष्ट करने हेतु वृद्धित किए गए वाक्यांश है। यहाँ पर 'आत्मा' शब्द को गुजराती और संस्कृत की तरह पुल्लिंग में प्रयोग किया गया है। जहाँ पर भी 'चंदूभाई' नाम का प्रयोग हुआ है, वहाँ पर पाठक खुद को समझें। 'दादावाणी' के इस अंक में अगर आप कोई बात न समझ पाएँ तो प्रत्यक्ष सत्संग में पधारकर समाधान प्राप्त करें। अनुवाद में कोई कमी नज़र आए तो हमें सूचित करने की कृपा करें, ताकि भविष्य में सुधार किया जा सकें। ऐसी क्षतियों के लिए हम आपके क्षमाप्रार्थी है।

निष्पक्षपाती रूप से थर्मामीटर दिखाता है सबकुछ

प्रश्नकर्ता : हम मोक्ष में जाने वाले हैं, यह कैसे पता चलता है?

दादाश्री : सब पता चलता है। अपना आत्मा है न, वह थर्मामीटर जैसा है। भूख लगे तो पता नहीं चलता? संडास जाना हो तो आपको पता चलता है या नहीं चलता? सभी कुछ पता चलता है। किस योनि में जाने वाला है, उसका भी पता चलता है। निष्पक्षपाती रूप से देखता नहीं है। खुद तटस्थ भाव से देखे न, तो आत्मा थर्मामीटर जैसा है। जितना आप कहोगे उतना बता देगा।

प्रश्नकर्ता : उस स्टेज पर आना पड़ेगा न?

दादाश्री : नहीं, लेकिन आत्मा उस स्टेज वाला ही है। सिर्फ निष्पक्षपाती रूप से देखना ही है। साथ में हमें पक्षपात में नहीं पड़ना चाहिए। संडास जाने का अंदर अपने को पता तो तुरंत चल जाता है, लेकिन साथ-साथ पक्षपात यानी क्या? अपने यहाँ अगर कोई सोने का व्यापारी आया हो और उनके साथ बातों में पड़े रहें, तो क्या होगा फिर? सोने के प्रति जो पक्षपात हुआ, इसलिए यह थर्मामीटर जो संडास जाने का दिखा रहा हो, वह बंद हो जाता है फिर। वर्ना, यदि पक्षपात नहीं हो न, तो आत्मा थर्मामीटर जैसा है, सभी कुछ दिखाए ऐसा है।

नीयत चोर, इसलिए मगन पुद्गल पक्ष में

रात को कोई मुँह में इतना श्रीखंड डाल दे और उसके बाद उससे पूछे कि यह क्या है? तो घोर अंधेरे में भी वह सारा वर्णन कर सकता है। अरे भाई, इतनी सारी शक्ति है! अंधेरे में तू श्रीखंड का वर्णन कर रहा है कि उसमें दही है, लेकिन दही में ज़रा सी गंध है। तो अंधेरे में किस प्रकार से जाना तूने यह? खट्टा-मीठा लगा इसलिए दही है, शक्कर है, सारा हिसाब ढूँढ निकाला। और फिर उसमें ईलाइची है, चिरौंजी है, किशमिश है। तो क्या यह नहीं आएगा? लेकिन नीयत चोर है। खाली बैठकर सोचना ही नहीं है। यों यदि रात को श्रीखंड के बारे में बता देता है तो क्या यह सब नहीं आएगा?

कृपालुदेव ने कहा है न, कि आत्मा यों थर्मामीटर (जैसा) है। तो थर्मामीटर कहने के बाद में फिर हमें बुखार चढ़ा या उतरा हो, तो उसका हमें पता नहीं चलता? लेकिन नीयत ही चोर है यह। और दूसरा, एक पड़ोसी मिलता है तो वह भी चोर नीयत वाला। 'लो, ये पेपर पढ़ो, साहब' ऐसा कहता है। अरे भाई, पेपर क्यों पढ़वा रहा है? और कुछ बता, बोल न कुछ अच्छा! पेपर दे जाता है पढ़ने के लिए। इस प्रकार उसे लोकसंज्ञा में से बाहर निकलने ही नहीं देता। कृपालुदेव ने बहुत कहा, लोकसंज्ञा दु:खदायक है, त्रासदायक है लेकिन फिर भी लोकसंज्ञा में रहते हैं न लोग आराम से!

ज्ञान के बाद थर्मामीटर दिखाता है खुद की भूलें

प्रश्नकर्ता : दादा, ये सब तो स्थूल बातें

हुईं, लेकिन खुद की जो अनंत सूक्ष्म भूलें हो रही हैं उनका पता तो अंदर शुद्धता आए, ज्ञान होने के बाद ही आत्मा वास्तव में थर्मामीटर हो जाता है न?

दादाश्री : सही है, सिर्फ आत्मा ही शुद्ध हो जाना चाहिए, उसे शुद्धता की प्राप्ति हो जानी चाहिए, कि मैं यह चंदू (मैं) नहीं हूँ और यह (मैं) शुद्धात्मा हूँ, ऐसा होना चाहिए। तो अपने यहाँ ज्ञान मिलने के बाद आत्मा वास्तव में थर्मामीटर जैसा हो जाता है।

बाकी अज्ञानता में खुद सहज स्वभाव से जो कार्य या क्रिया कर रहा होता है न, उसमें खुद की भूल है ऐसा कभी भी नहीं दिखता। बल्कि भूल दिखाए तब भी उसे उल्टा ही दिखाई देता है। वह जप करता हो या तप करता हो, त्याग करता हो, उसे खुद की भूल नहीं दिखाई देती। वह तो, जब खुद आत्मस्वरूप हो जाए, ज्ञानी पुरुष द्वारा दिया गया आत्मा प्राप्त हो जाए तो सिर्फ आत्मा ही थर्मामीटर जैसा है, जो भूल दिखाता है। बाकी, भूल नहीं दिखाई देती किसी को। भूल दिखाई दे तब तो काम ही हो गया। भूल खत्म हो तो परमात्म सत्ता प्राप्त होती है। परमात्मा तो है ही, लेकिन सत्ता प्राप्त नहीं होती। परमात्मा की सत्ता कब प्राप्त होती है? भूल खत्म हो जाए तो। वह भूल खत्म होती नहीं है और सत्ता प्राप्त होती नहीं है। और हम परमात्मा (ज्ञान लेने के बाद) हैं, ऐसा *लक्ष* बैठा है। इसलिए अब धीरे-धीरे श्रेणियाँ चढ़ता है वह। उससे सत्ता प्राप्त होती रहती है।

प्रश्नकर्ता : आपने कहा न, कि थर्मामीटर सभी कुछ बताता है, वह कौन है?

दादाश्री : वही प्रज्ञा, (ज्ञान के बाद) सावधान कर-करके मोक्ष में ले जाती है।

'प्रज्ञा', वह ज्ञान का स्वरूप

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञा कैसे उत्पन्न होती है और कहाँ से उत्पन्न हुई?

दादाश्री : वह तो, जब 'हम' ज्ञान देते हैं तभी उत्पन्न हो जाती है। ज्ञान से प्रज्ञा उत्पन्न हो गई। प्रज्ञा का काम शुरू हो गया।

प्रश्नकर्ता : ज्ञान और प्रज्ञा में फर्क क्या है?

दादाश्री : प्रज्ञा तो ज्ञान से उत्पन्न होने वाली एक शक्ति है। प्रज्ञा आत्मा की ही डिरेक्ट शक्ति है, डिरेक्ट लाइट है और अज्ञा इनडिरेक्ट लाइट है। अज्ञा, वह टॉप पर पहुँची हुई बुद्धि अज्ञा कहलाती है।

प्रज्ञा स्वतंत्र है बुद्धि से

अब प्रज्ञा जो है वह मूल आत्मा का गुण है और इन दोनों (तत्वों) का संपूर्ण डिविज़न हो जाने के बाद, पूरी तरह से मुक्त हो गए-अलग हो गए, उसके बाद फिर वह आत्मा में फिट हो जाती है। तब तक मोक्ष में ले जाने के लिए वह अलग हुई है, आत्मा से।

प्रश्नकर्ता : क्या टोटल सेपरेशन हो जाने के बाद प्रज्ञा का उदय होता है और यह जो लौकिक बुद्धि है, वह चली जाती है?

दादाश्री : अलग हो जाने के बाद बुद्धि खत्म हो जाती है। प्रज्ञा का अनुभव तो पहले से ही शुरू हो जाता है, संपूर्ण अलग (जुदापन) नहीं हुआ हो तब भी। प्रतीति बैठने का अर्थ ही यही है कि एक तरफ प्रज्ञा शुरू हो गई। बुद्धि, बुद्धि की जगह पर रहती है और प्रज्ञा प्रकट हो जाती है।

प्रज्ञा की सिर्फ ज्ञानक्रियाएँ

प्रश्नकर्ता : इसके बाद प्रज्ञा की जो दशा आती है, उसे ज्ञान कहा जाता है?

दादाश्री : नहीं, प्रज्ञा ज्ञान का ही स्वरूप है, उसी का भाग है। लेकिन जब तक यह शरीर है तब तक उसे प्रज्ञा कहा जाता है और सभी कार्य भी वही करती है। और जब शरीर नहीं रहता तब (उसे)आत्मा कहा जाता है।

प्रश्नकर्ता : क्योंकि आत्मा कुछ भी नहीं करता इसलिए उसके एजेन्ट के रूप में प्रज्ञा सबकुछ करती है?

दादाश्री : हं, वह कर्ता के तौर पर नहीं है, सिर्फ ज्ञानक्रियाएँ करती है। हमें यह ज्ञान मिलता है, इसलिए आत्मा हो जाते हैं लेकिन अभी तक आत्मा श्रद्धा में, प्रतीति में, दर्शन में है लेकिन ज्ञान में नहीं आया है, यह चारित्र में नहीं आया है, तब तक प्रज्ञाशक्ति काम करती रहती है।

प्रज्ञा - बुद्धि के कार्य में फर्क

प्रश्नकर्ता : यह काम प्रज्ञा ने किया है या बुद्धि ने, उसका पता किस तरह से चलेगा? बुद्धि और प्रज्ञा की परिभाषा क्या है? कुछ बात होती है तब बुद्धि दौड़ाई, बुद्धि चलाई, ऐसा कहते हैं तो बुद्धि क्या है?

दादाश्री : जो *अजंपा* (बेचैनी, अशांति) करे, वह बुद्धि है। प्रज्ञा में *अजंपा* नहीं होता। आपको ज़रा सा भी *अजंपा* हुआ तो जानना कि बुद्धि का चलन है। आपको बुद्धि का उपयोग नहीं करना हो तो भी उसका उपयोग होता ही है। वही आपको शांति से नहीं बैठने देती है। वह आपको 'इमोशनल' करवाती है। उस बुद्धि से हमें ऐसा कहना चाहिए कि 'हे बुद्धि बहन! आप अपने मायके चली जाओ। अब आपके साथ हमें कुछ लेना-देना नहीं है'। सूर्य का उजाला होने के बाद मोमबत्ती की ज़रूरत है क्या? अर्थात् आत्मा का प्रकाश होने के बाद बुद्धि के प्रकाश की ज़रूरत नहीं रहती।

बुद्धि संसार का काम कर देती है, मोक्ष का नहीं। एक व्यू पोइन्ट, वह बुद्धि है और रियल और रिलेटिव दोनों व्यू पोइन्ट उत्पन्न होते हैं, तभी प्रज्ञा उत्पन्न होती है। और प्रज्ञा उत्पन्न होती है तब दोनों व्यू पोइन्ट से, रियल और रिलेटिव दोनों को अलग-अलग देखती है और उससे मोक्ष होता है। जहाँ प्रज्ञा उत्पन्न होती है, वहाँ पर सनातन सुख है। बुद्धि से तो कल्पित दु:ख और वह भी निरंतर का! सुख के पीछे दु:ख भरा हुआ होता है और फिर दूषमकाल! अत: अपार दु:ख और संपूर्ण मोहनीय व्याप्त है, निरंतर मूर्च्छा में भटक रहे हैं!

अब, वह बुद्धि संसार से बाहर निकलने न दे, ऐसी है। 'खुद को' मुक्त होने के इच्छा होती है तो बुद्धि 'उसे' घुमा (पलट) देती है। क्योंकि वह संसार में ही रखती है और संसार में हेल्प करती है। वह हमें संसार में सेफसाइड कर देती है। प्रज्ञा बिल्कुल भी संसार में नहीं रहने देती, सचेत करती रहती है, कि 'यहाँ उलझन है, यहाँ भूल है' और मोक्ष में ले जाना चाहती है। इन दोनों का घर्षण चलता रहता है।

प्रज्ञाशक्ति पूर्ण मोक्ष तक पहुँचाती है

प्रश्नकर्ता : यह ज्ञान लेने के बाद महात्माओं को ऐसा रहता है कि खुद शरीर से जुदा है। शुद्धात्मा का *लक्ष* बैठ गया है और उसके बाद देखने की जो सभी क्रियाएँ चलती रहती हैं, वे सब प्रज्ञा से होती हैं न?

दादाश्री : सारा प्रज्ञाशक्ति का ही काम है।

प्रश्नकर्ता : तो इसका अर्थ यह हुआ कि ज्ञानक्रिया से देखना, वह तो बहुत दूर रहा?

दादाश्री : वही, अभी प्रज्ञाशक्ति की ही ज्ञानक्रिया है। जो वास्तविक ज्ञानक्रिया है, वह तो

जब इन सभी फाइलों का *निकाल* हो जाएगा तब वह ज्ञानक्रिया हो पाएगी।

प्रश्नकर्ता : आप्तवाणी में पढ़ा है कि जो अशुद्ध है, अशुभ है, शुभ है, उन सभी क्रियाओं को जो जानती है, वह बुद्धि क्रिया है और जो सिर्फ शुद्ध को ही जानती है, वह ज्ञानक्रिया है। इसलिए मुझे ऐसा लगा कि हमारी प्रज्ञा सब देखती है।

दादाश्री : हाँ, प्रज्ञा से। वह जो प्रज्ञा है, वह कुछ हद तक, जब तक फाइलों का *निकाल* करते हैं तब तक प्रज्ञा रहती है। फाइलें खत्म हो जाने के बाद आत्मा ही खुद जानता है।

प्रश्नकर्ता : इसका मतलब यह प्रज्ञा मोक्ष के दरवाज़े तक मदद करने के लिए है?

दादाश्री : दरवाज़े तक नहीं, मोक्ष में पूर्ण तक बिठा देती है। हाँ, पूर्णाहुति करवाने वाली यह प्रज्ञा ही है।

प्रश्नकर्ता : मोक्ष में जाने के बाद प्रज्ञाशक्ति वापस आती है?

दादाश्री : नहीं, वह शक्ति मोक्ष में पहुँचाने तक ही रहती है (यानी 'केवलज्ञान होने तक ही' समझना है)!

बुद्धि का सुनने पर सचेत हो जाओ

प्रश्नकर्ता : बुद्धि का दखल होता है, तब हमें पता चलता है कि बुद्धि ने यह दखल किया। वह कौन बताता है? शुद्धात्मा बताता है या प्रज्ञाशक्ति बताती है?

दादाश्री : शुद्धात्मा तो वह काम करता ही नहीं है, प्रज्ञाशक्ति ही बताती है। शुद्धात्मा के बजाय उसके प्रतिनिधि के रूप में प्रज्ञाशक्ति ही काम करती है और वह सब बताती है। और वह तो बल्कि अगर आप उस तरफ जा रहे हों न, तो वापस खींचकर यों फिर आत्मा की तरफ ले आती है। बुद्धि को अज्ञा कहा जाता है। अज्ञा का काम क्या है कि ये मोक्ष में न चले जाएँ, इसलिए वह इसी तरफ खींचती रहती है। प्रज्ञा और अज्ञा, यह झंझट इन दोनों की है और अगर हम अज्ञा में एकाकार हो गए तो फिर हो जाता है अज्ञा का काम, फिर वह खुश हो जाती है। तब फिर प्रज्ञा थक जाती है। अगर मूल मालिक ही उसमें एकाकार हो जाए तो फिर क्या हो सकता है!

प्रश्नकर्ता : दादा, यह बुद्धि कब तक दखल करेगी इस तरह से?

दादाश्री : जब तक उसे कीमती माना है तब तक। पड़ोस में एक पागल व्यक्ति रहता हो, वह पाँच गालियाँ देकर चला जाता है रोज़, तो जब वह गालियाँ देने आता है तब हम समझ जाते हैं कि यह पागल आया। हम चाय पीते रहते हैं और वह गालियाँ देता रहता है। इसी प्रकार से भले ही बुद्धि आए और जाए, हमें अपने में रहना है। बाकी का सब जो है वह *पूरण-गलन* (चार्ज होना, भरना-डिस्चार्ज होना, खाली होना) है। आप नहीं कहोगे तब भी अलग रहेगा और अगर आप कहोगे तो भी आए बगैर रहेगा नहीं।

प्रश्नकर्ता : क्या आप ऐसा कहना चाहते हैं कि जब यह बुद्धि दखल कर रही हो, तब हमें उसकी नहीं सुननी चाहिए?

दादाश्री : नहीं सुनो तो बहुत अच्छा। लेकिन सुने बगैर रहोगे ही नहीं न आप। अगर कहें कि आप मत सुनना तो भी आप सुने बगैर रहोगे नहीं न! मोक्ष में जाना हो तो बुद्धि की ज़रूरत नहीं है, संसार में भटकना हो तो बुद्धि की ज़रूरत है। जिसने ऐसा सब नहीं पढ़ा हो और ब्लैन्क पेपर हो न, तो उसे तो 'यह चंदूभाई

और यह मैं', बस! हो गया बहुत अच्छा। अर्थात् यह सारा डिस्चार्ज है।

प्रश्नकर्ता : दादा, हमें पता चलता है कि यह बुद्धि दखल कर रही है, अगर फिर भी हम बुद्धि का सुनें तो उसे क्या हुआ कहेंगे?

दादाश्री : वह तो हमें अभी तक बुद्धि का सुनने में इन्टरेस्ट है लेकिन फिर भी प्रज्ञाशक्ति है, वह उसे उसी तरफ खींचती है।

प्रश्नकर्ता : हमें पता चलता है कि बुद्धि दखल कर रही है, फिर भी हम बुद्धि का सुनते रहते हैं, उसे टेढ़ापन कहा जाएगा न?

दादाश्री : यदि सुनते रहें लेकिन उस पर अमल न करें तो हर्ज नहीं है। बाकी देखते ही रहना चाहिए कि बुद्धि क्या कर रही है! अपने स्वभाव में रहें तो झंझट नहीं है। आपमें बुद्धि ज़्यादा है लेकिन दादा की कृपा प्राप्त हो चुकी है इसलिए परेशानी नहीं होगी।

प्रश्नकर्ता : दादा, मेरी बुद्धि बहुत चलती है लेकिन फिर उसे ज़रा शांत कर देता हूँ। अब मैं उसकी नहीं सुनता हूँ।

दादाश्री : बुद्धि की बात को सुनना ही नहीं है। हमारी बुद्धि चली गई है तभी यह झंझट गई न! स्वतंत्र, कोई कुछ भी दखल ही नहीं करता न फिर!

दखल को निकालना है या अलग रहना है?

प्रश्नकर्ता : यह दखल है तो उसका हमें खुद को कैसे पता चलेगा?

दादाश्री : सबकुछ पता चल सकता है, खुद अगर तटस्थ भाव से देखे न, तो!

प्रश्नकर्ता : यह जो खुद की दखल है और प्रकृति खुद के स्वभाव में है, तो इन दोनों के बीच में फर्क कैसे पता चलेगा? प्रकृति अपने स्वभाव के अनुसार दो डिश ही आइस्क्रीम खाती है, तो इसमें खुद की दखल कौन सी?

दादाश्री : यह दखल ज़्यादा खिलाती है और दूसरा क्या करती है? 'खाने जैसा नहीं है। हं! ठंडी है। गला खराब हो जाएगा।' वह भी दखल है। खाने नहीं दे और ज़्यादा खिला दे, ये दोनों ही दखल हैं!

प्रश्नकर्ता : तो उसका संतुलन कैसे रखा जा सकता है?

दादाश्री : अगर दखल नहीं करे तो अपने आप ही संतुलन रहेगा।

प्रश्नकर्ता : कोई भी चीज़ अपने आप चलती रहती है लेकिन हमारी कुछ न कुछ दखल रहती है।

दादाश्री : यह सब दखल ही है। जितना कम हुआ उतना अच्छा! अब सिनेमा की दखल कम हुई, रात को नहीं खाता वह दखल भी कम हुई, होटल में नहीं जाता वह दखल भी कम हुई, कितनी सारी दखलें कम हो गईं!

प्रश्नकर्ता : लेकिन अभी भी बहुत सारी हैं न! अभी भी हैं, बहुत दखलें हैं! दिन भर में जितनी पहचान नहीं पाते, उनका क्या?

दादाश्री : सभी पहचानी जा सकती हैं। जब तू करता है तब पता चल जाता है कि यह दखल हो रही है वापस। थर्मामीटर को क्या देर लगे बताने में कि कितना बुखार आया है?

प्रश्नकर्ता : पता चलता है कि यह दखल हो गई है लेकिन जाती नहीं है न!

दादाश्री : उसे निकालना नहीं है, उससे अलग रहना है। अलग रहेंगे तो अंदर दखल बंद

हो जाएगी। खुद के स्वभाव में रहा जा सकेगा। मेहमान रसोई में नहीं जाता है तो मेहमान कितना कीमती माना जाता है और रसोई में जाकर कढ़ी हिलाने बैठ जाए तो? उसी तरह यह मेहमान कहीं भी जाए, वहाँ पर दखल ही करता है। यह मेहमान ऐसा करता है।

प्रज्ञाशक्ति तो क्या कहती है? चेत और देख। अन्य कुछ दखल करने की ज़रूरत नहीं है।

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञाशक्ति तो उसे बताने का काम करती ही रहती है, उसमें हमने दखल की?

दादाश्री : हाँ, हम दखल करते हैं। चेतावनी देती है फिर भी उसकी सुनते नहीं है और दखल करने से तो लंबे टाइम तक चलता है फिर।

चेतावनी किसे देती है? दखल करने वाले को चेतावनी देती है कि 'ऐसा क्यों कर रहा है तू? इससे क्या फायदा मिलेगा?' फिर भी यह करता रहता है। इस तरह प्रज्ञाशक्ति का स्वभाव ऐसा है कि उसे चेतावनी दिए बगैर रहती ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : उस समय भगवान क्या कर रहे होते हैं?

दादाश्री : भगवान तो उदासीन, वीतराग।

दखल निकाले दखल को

प्रश्नकर्ता : यह दखल हुई और हमने निश्चय किया कि अब यह दखल नहीं करनी है, तो यह नई दखल नहीं कहलाएगी?

दादाश्री : लेकिन वह दखल पहले वाली दखल को निकाल देती है न! पहले वाली दखल को निकालकर यह दखल होती है न! यह दखल उत्तम है।

प्रश्नकर्ता : दखल, दखल को निकालती है लेकिन उसके बाद क्या यह दखल रह जाती है?

दादाश्री : यह दखल तो अपने आप चली जाती है। बाद में निकालनी नहीं पड़ती। सब चले जाओ। तो कहेंगे, चले जाएँगे! बस! निकालना नहीं पड़ता। तुझे ऐसा लगता था कि निकालना पड़ेगा इसे?

यह दखल है लेकिन यह दखल अपने आप ही चली जाएगी। हम कहें कि अब यहाँ आपका काम पूरा हो गया है, चले जाओ, तो चली जाएगी। लेकिन वह पहले वाली दखल ऐसे नहीं जाती। पहले वाली दखल इस दखल से जाएगी।

मोक्षमार्ग तो बहुत मुश्किल है। उस तरफ एक इंच भी आगे बढ़ना बहुत कीमती माना जाता है। कोई कहे कि आत्मा अलग है तो वह बड़ा साइन्टिस्ट माना जाता था। उसे पता चला कि यह जुदा है, अन्य कुछ नहीं। आप तो उससे भी आगे पहुँच गए।

चंदूभाई आइस्क्रीम खाने बैठे हों और अगर उसमें दखल नहीं करे तो दो डिश खाकर उठ जाएँगे लेकिन इसने तो और दखल की, कि यह अच्छी है। अरे भाई, दो-चार-पाँच खा लो न!

प्रश्नकर्ता : यानी कि वह खुद दखल करता है।

दादाश्री : हाँ। अब वहाँ पर प्रज्ञा उसे चेतावनी देती है, 'अरे भाई, ऐसा किसलिए?'

प्रश्नकर्ता : 'तीन-चार खा लो' ऐसा कौन बताता है?

दादाश्री : वही, तेरा चारित्रमोह। चारित्रमोह को विलय भी किया जा सकता है। यों देखो, ज्ञाता-द्रष्टा रहो तो चला जाएगा और अगर जागृति नहीं रखी और निश्चय नहीं किया तो चारित्रमोह पेन्डिंग रहेगा।

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञाशक्ति दिखाती है न, वहाँ

से तो निकाला जा सकता है, ऐसा है। अर्थात् दखल बंद हो जाए, ऐसा संभव है।

दादाश्री : सही है।

प्रश्नकर्ता : फिर, वाणी से दखलंदाज़ी हो जाती है?

दादाश्री : हाँ, होती है। सभी में दखलंदाज़ी तो होती है न! वर्तन से भी दखलंदाज़ी होती है। 'चलो' कहते हैं, 'जल्दी है'! उतावला हो जाता है। जैसे वहाँ गाड़ी छूट जाने वाली हो। यों तो अभी छूटने में देर है। लेकिन सभी जगह पर दखलंदाज़ी ही करता रहता है।

प्रज्ञा के प्रति सिन्सियर रहें तो वह चेतावनी देती है

प्रश्नकर्ता : दादा, अब दखलंदाज़ी बंद करने का उपाय बताइए।

दादाश्री : ज्ञाता-द्रष्टा हो जाओ तो दखलंदाज़ी बंद हो जाएगी। ज्ञाता-द्रष्टा तो खुद का गुणधर्म है। वह जो चारित्रमोह आया है उसे जानो कि यह चारित्रमोह है। उसे देखना और जानना है। देखोगे तो चला जाएगा।

प्रश्नकर्ता : जो देखने-जानने वाला है, वह खुद ही दखल करता है?

दादाश्री : देखने-जानने वाला क्या कभी करता होगा? दखल करने वाले को तो वह देखता है, जानता है कि यह दखल कर रहा है। डिस्चार्ज अहंकार दखलंदाज़ी करता है।

प्रश्नकर्ता : बुद्धि दखल करती है?

दादाश्री : बुद्धि भी दखल करती है, सभी दखल करते हैं। अहंकार-बुद्धि-चित्त और मन, ये सभी दखल वाले ही हैं न! लेकिन मूल गुनहगार माना जाता है अहंकार। क्योंकि उसके खुद के हस्ताक्षर हैं।

प्रश्नकर्ता : मन का स्वभाव तो, विचार करके चला जाता है?

दादाश्री : नहीं, न भी जाए। दखल करके ही छोड़ता है।

प्रश्नकर्ता : लेकिन वह अहंकार जितना फोर्स वाला नहीं है न? यानी कि मन हस्ताक्षर करने वाले जितना फोर्स वाला नहीं है न?

दादाश्री : अवश्य है, बहुत ही! मन एक जिद पकड़ ले तो सुबह तक चले। यानी कि कोई भी सीधा नहीं है। इसलिए खुद को ही सीधा होना पड़ेगा। वे तो सीधे ही थे, उसे हमने बिगाड़ा है। इसलिए अगर हम सीधे हो जाएँगे तो वे सुधरेंगे।

प्रश्नकर्ता : इसमें तो प्रज्ञा जितनी चेतावनी दे, उतना ही हम सावधान हो सकते हैं न?

दादाश्री : प्रज्ञा तो सारी चेतावनी देने को तैयार है। वह चेतावनी दे और उसे मानें नहीं तो वह बंद हो जाती है।

प्रश्नकर्ता : उदाहरण के तौर पर हम अगर उसका सभी कुछ मानें तो वह सभी चेतावनियाँ देगी?

दादाश्री : भान रहता है सारा। हाँ, सभी चेतावनियाँ देती है। हम उसके प्रति सिन्सियर रहें तो वे सभी चेतावनियाँ देती है। उसे कुछ भी करके मोक्ष में ले जाना है इसलिए अगर उसकी खुद की इच्छा के अनुसार हो रहा हो, उसकी भावना के अनुसार हो रहा हो तो तैयार ही रहती है।

प्रज्ञाशक्ति दिखाती है भीतर के दाग़

प्रश्नकर्ता : ज्ञान लिए पाँच-पाँच साल हो गए फिर भी अभी तक हमारा मेल क्यों नहीं बैठता?

दादाश्री : अब मेल तो बैठ ही गया कहा जाएगा। ऐसा किस तरह का मेल मिलाना है?

प्रश्नकर्ता : इन भूलों में से।

दादाश्री : अंदर साफ हो जाएगा। अभी निकलता रहेगा माल तो। कचरा जो भरा है न, वह तो निकलेगा ही न! वर्ना टंकी खाली नहीं होगी न! पहले तो, कचरा निकल रहा है ऐसा जानते ही नहीं थे। अच्छा निकल रहा है, ऐसा ही जानते थे न? उसे संसार कहते हैं। और 'यह कचरा माल है', ऐसा जान लिया तो वह मुक्त होने की निशानी है।

जो खुद करता है न, उसमें खुद को, 'भूल है', ऐसा कभी पता नहीं चलता।

प्रश्नकर्ता : हम जानते हैं कि यह करने जैसा नहीं है, यह गलत है, फिर भी भूल हो जाती है। क्या वे पिछले जो सारे कर्म लेकर आए हैं, उनके कारण?

दादाश्री : वह तो कचरा माल भरकर लाए थे। वह हमें निकालना तो पड़ेगा न?

यह जो समझ में आता है कि यह गलत माल भरकर ले आए हैं, वहाँ पर आत्मविज्ञान है, वहाँ प्रज्ञा है वह 'देखती' है। देखती है वह प्रज्ञा है। प्रतिक्रमण करके यह 'मेरा नहीं है' इतना बोले तो भी बहुत हो गया। अभी तक 'मेरा' कहकर चिपकाया है। अब, यह 'मेरा नहीं है', कहकर छोड़ देना है।

यदि रोज़ पच्चीस जितनी भूलें समझ में आएँ, तब तो गज़ब शक्ति उत्पन्न होगी। संसार बाधक नहीं है, खाना-पीना बाधक नहीं है। नहीं तप ने बाँधा या नहीं त्याग ने बाँधा है। खुद की भूलों ने ही लोगों को बाँधा है। अंदर तो अपार भूलें हैं। पर सिर्फ बड़ी-बड़ी पच्चीसेक जितनी भूलें मिटाए न तो छब्बीसवीं अपने आप जाने लगेगी। कुछ लोग तो भूल को जानते हैं, फिर भी खुद के अहंकार को लेकर उसे भूल नहीं कहते। यह कैसा है? एक ही भूल अनंत जन्म बिगाड़ डालती है। यह तो पुसाएगा ही नहीं। क्योंकि *नियाणां* (अपना सारा पुण्य लगाकर किसी एक वस्तु की कामना करना) मोक्ष का किया था, वह भी *नियाणां* पूरी तरह से नहीं किया था। इसलिए तो ऐसा हुआ न! दादा के पास आना पड़ा न!

ज्ञान मिलने के बाद भूलें किस माध्यम से दिखने लगती हैं? प्रज्ञाशक्ति से। आत्मा में से जो प्रज्ञाशक्ति प्रकट हुई है, उससे सभी भूलें दिखने लगती हैं और वे भूलें दिखाई देने लगती हैं हमें इसलिए तुरंत हम हल ला देते हैं। हम कहते हैं कि 'भाई, प्रतिक्रमण करो'। प्रज्ञाशक्ति वह दाग़ दिखाती है तब हम कहते हैं कि 'इसे धो दो'। इस तरह सभी कपड़े धो देने हैं। सभी दाग़ों के प्रतिक्रमण किए तो फिर साफ!

प्रज्ञाशक्ति करवाती है प्रतिक्रमण

प्रश्नकर्ता : हम जो प्रतिक्रमण करते हैं, वह *पुद्गल* (अहंकार) का करते हैं या किसका करते हैं?

दादाश्री : *पुद्गल* का ही, और किसका?

प्रश्नकर्ता : *पुद्गल* का न! तो उसी तरह अपने *पुद्गल* का भी प्रतिक्रमण हो सकता है या नहीं?

दादाश्री : अपने ही *पुद्गल* का करना है। सामने वाले के *पुद्गल* का तो जब उसे नुकसान पहुँचाया हो, तब करना पड़ता है, वर्ना अपने ही *पुद्गल* का (अंदर उत्पन्न होने वाले कषायों का) प्रतिक्रमण करना है न!

प्रश्नकर्ता : ये अपने *पुद्गल* का प्रतिक्रमण कौन करता है?

दादाश्री : वह सब अपनी प्रज्ञा करती है। (प्रज्ञा चंदूभाई से करवाती है।)

प्रश्नकर्ता : वह जो भीतर चंदूभाई से कहता है कि 'आपने यह भूल की है, इसलिए प्रतिक्रमण करो', तो वह कहने वाला कौन है? कौन ऐसा कहता है?

दादाश्री : वह अपनी प्रज्ञा नाम की जो शक्ति है न, वह सचेत करती है कि आप यह प्रतिक्रमण करो।

प्रश्नकर्ता : जब हम अपना प्रतिक्रमण करते हैं, तब वास्तव में *पुद्गल,* शुद्धात्मा का (प्रतिक्रमण) करता है न?

दादाश्री : इस प्रतिक्रमण में प्रज्ञाशक्ति और शुद्ध चेतन (सम्यक् दृष्टि-शुद्ध चित्त) काम करते हैं।

प्रश्नकर्ता : अतिक्रमण अन्य के लिए नहीं बल्कि खुद अपने लिए भी हो सकता है?

दादाश्री : खुद का तो अपने शुद्धात्मा के समक्ष करना है। हमें क्या कहना है कि 'हे चंदूभाई, प्रतिक्रमण करो। भाई, आप क्यों ऐसी भूलें करते हो?'

प्रतिक्रमण अब 'आपको' नहीं करने हैं। जो 'ज्ञाता-द्रष्टा' है, वह 'करता' नहीं और जागृति हो तभी ज्ञाता-द्रष्टा रह सकता है और जागृति हो तभी प्रतिक्रमण हो पाते हैं। यानी प्रतिक्रमण चंदूभाई को ही करना है। जिसने अतिक्रमण किया, उसे ही 'हमें' कहना है कि, 'आप' प्रतिक्रमण करो। जो आक्रमण करता है, उसे ही कहना है, आप प्रतिक्रमण करो। आप चंदूभाई को प्रतिक्रमण करने के लिए कहते हो तो आप यदि शुद्धात्मा हो तभी ऐसा हो सकता है।

रियल में से उत्पन्न होती है प्रज्ञाशक्ति

प्रश्नकर्ता : प्रतिक्रमण कौन करता है?

दादाश्री : जो अतिक्रमण करता है, वह।

प्रश्नकर्ता : लेकिन अतिक्रमण कौन करता है?

दादाश्री : अतिक्रमण, वह अहंकार करता है।

प्रश्नकर्ता : अतिक्रमण अहंकार करता है तो प्रतिक्रमण भी अहंकार को ही करना है?

दादाश्री : हाँ, प्रतिक्रमण भी अहंकार को ही करना है। लेकिन चेतावनी किसकी? प्रज्ञा की। प्रज्ञा कहती है, 'अतिक्रमण क्यों किया?' प्रज्ञा क्या सचेत करती है? 'अतिक्रमण क्यों किया? तो अब प्रतिक्रमण करो।'

प्रश्नकर्ता : यानी प्रज्ञा 'रिलेटिव' में से आती है या 'रियल' में से?

दादाश्री : वह 'रियल' में से आती है। यानी वह 'रियल' में से उत्पन्न होने वाली शक्ति है। दो तरह की शक्तियाँ हैं। रियल में से उत्पन्न होने वाली शक्ति, वह है 'प्रज्ञा' और रिलेटिव में से उत्पन्न होने वाली शक्ति, वह 'अज्ञा' कहलाती है। अज्ञा, वह संसार के बाहर निकलने ही नहीं देती और प्रज्ञा तो मोक्ष जाने तक छोड़ती ही नहीं।

प्रश्नकर्ता : यानी अहंकार 'रिलेटिव' में ही आता है न?

दादाश्री : वह सब रिलेटिव में ही जाता है।

प्रश्नकर्ता : दादा, रियल और रिलेटिव, दोनों अलग हैं, तो फिर हमें बीच में आने की क्या ज़रूरत आ पड़ी? प्रतिक्रमण करने की क्या ज़रूरत है? हमें रिलेटिव में पड़ने की क्या ज़रूरत?

दादाश्री : 'रिलेटिव' में पड़ने की ज़रूरत नहीं है लेकिन सामने वाले को दुःख हो गया इसलिए 'हमें' चंदूभाई से (खुद से) कहना चाहिए कि, 'भाई, इसे दुःख हुआ ऐसा क्यों किया? इसलिए आप प्रतिक्रमण करो'। बस, यानी दाग़ धो डालना है। दाग़ लगते ही धो डालना है। हमें 'रिलेटिव' कपड़ा भी साफ रखना है।

प्रश्नकर्ता : दादा, यह जो दुःख देता है, वह 'रियल' देता है?

दादाश्री : 'रियल' तो कुछ करता ही नहीं है। सब 'रिलेटिव' में ही है और दुःख भी 'रिलेटिव' को ही पहुँचता है, 'रियल' को पहुँचता नहीं है।

दूसरों को दुःख हो वहाँ सचेत करे प्रज्ञाशक्ति

प्रश्नकर्ता : यह जो दुःख होता है, वह सामने वाले के अहंकार को होता है?

दादाश्री : हाँ, अहंकार को दुःख हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : तो प्रतिक्रमण करने की क्या ज़रूरत है? वापस रिलेटिव में जाने की क्या ज़रूरत है?

दादाश्री : लेकिन उसे जो दुःख हुआ, उसका दाग़ अपने रिलेटिव पर रहा न! रिलेटिव को दाग़ वाला नहीं रखना है। अंत में साफ करना पड़ेगा। इस कपड़े को साफ रखना है। क्रमण में हर्ज नहीं है। क्रमण यानी यों ही मैला हो जाए उसमें हर्ज नहीं है। ऐसे ही मैला हो जाता है, उसमें हर्ज नहीं है लेकिन दाग़ पड़ जाए तो उसे तुरंत धो देना है।

प्रश्नकर्ता : यानी 'रिलेटिव' को साफ रखना ज़रूरी है?

दादाश्री : ऐसा नहीं है। 'रिलेटिव' पुराना होगा, कपड़ा पुराना हो जाए उसमें हर्ज नहीं है। लेकिन अतिक्रमण से एकदम दाग़ लग जाए तो वह अपने विरुद्ध कहा जाएगा। इसलिए उस दाग़ को धो देना चाहिए। यानी ऐसा अतिक्रमण हो जाए तो प्रतिक्रमण करो। वह कभी कभार होता है, रोज़ नहीं होता और यदि प्रतिक्रमण नहीं हो पाए तो कोई बहुत बड़ा गुनाह नहीं है, लेकिन प्रतिक्रमण करना अच्छा है।

प्रश्नकर्ता : अतिक्रमण करने की सत्ता अपने हाथ में नहीं है तो प्रतिक्रमण करने की (सत्ता) अपने हाथ में कैसे हो सकती है?

दादाश्री : अतिक्रमण की सत्ता नहीं है। लेकिन यह प्रतिक्रमण तो भीतर सचेत करता है, भीतर जो चेतन है न, प्रज्ञाशक्ति, वह सचेत करती है।

अक्रम में प्रतिक्रमण के साथ सामायिक

प्रश्नकर्ता : अपने प्रतिक्रमण और सामायिक में क्या कनेक्शन (संबंध) है?

दादाश्री : प्रतिक्रमण तो जो अतिक्रमण हुआ हो, उसका करना है। आपका व्यवहार, वह क्रमण है और ज़रूरत से ज़्यादा बोला गया, वह अतिक्रमण है। इसलिए आपको चंदूभाई से कहना है कि 'अतिक्रमण क्यों किया? इसलिए प्रतिक्रमण करो'। अतिक्रमण हो जाए तो प्रतिक्रमण करना है।

सामायिक यानी 'मैं शुद्धात्मा हूँ' का भान, वह सामायिक है। पाँच आज्ञा में निरंतर सामायिक रहती है। समभाव से *निकाल* करना, वह पहली सामायिक। और सहज दशा में, स्वाभाविक रहना, वह हमारे जैसी सामायिक। वैसी आपकी भी थोड़ी-बहुत रहती है।

जब यह सामायिक करते हो, तब प्रकृति बिल्कुल सहज कहलाती है। सामायिक करते-करते वर्तमान काल में रहना आ जाएगा, यों ही नहीं

आ जाएगा। जब एक घंटे तक सामायिक में बैठते हो, तब वर्तमान में ही रहते हो न!

हल, सामायिक-प्रतिक्रमण से

प्रश्नकर्ता : सामायिक से साफ हो जाते हैं न?

दादाश्री : होते हैं न, बहुत हो जाते हैं। सामायिक से तो पूरा हल आ जाता है। यह जो प्रतिक्रमण है, वह प्रज्ञा का काम है। इसलिए बहुत फर्क पड़ जाता है, और सामायिक में वह देखता है, इसलिए धुल जाता है सारा। जितने दोष दिखाई दिए, उतने धुल जाते हैं।

प्रश्नकर्ता : सामायिक में तो आत्मा का ही काम है न?

दादाश्री : सीधा, डिरेक्ट। अपनी सामायिक यानी आत्मरूप में रहना। भीतर चंदूभाई (फाइल नं-1) के तंत्र में क्या चल रहा है, उसे देखना। चंदूभाई को यह विचार आया, वह विचार आया, फलाँ आया, उन सभी को देखना, हम देखने वाले। विचार, वे दृश्य हैं, हम द्रष्टा और समझ में आए ऐसे जो भी विचार हैं, वे ज्ञेय कहलाते हैं और हम ज्ञाता।

फिर चंदूभाई की बुद्धि क्या करती है, चित्त क्या करता है, पैर में दर्द होता है, वहाँ चंदूभाई ध्यान रखते हैं या नहीं, वह सब 'हमें' जानना है। पेट में भूख लगी हो, उसे भी जानना और किसी बाहर वाले का विचार आया, उसे देखना, यह है अपनी सामायिक! शुद्ध रहना, शुद्ध देखना, सारी रात किच-किच की हो और फिर जब सामायिक में बैठे, तब शुद्ध देखना और कहना है, 'चंदूभाई, माफी माँग लो'!

प्रश्नकर्ता : दादा, ऐसी सामायिक यथार्थ रूप से कैसे की जाती है?

दादाश्री : यहाँ ये सभी लोग वैसी ही 'सामायिक' करते हैं। फिर सामायिक में उस विषय को रखकर ध्यान करते हैं तो वह विषय विलय होता जाता है, खत्म होता जाता है। जो-जो आपको विलय करना हो, उसे इस सामायिक में विलय कर सकते हो। आपको अगर किसी चीज़ के लिए जीभ का स्वाद बाधक हो तो, उसी विषय को 'सामायिक' में लेना है। और उसमें जो दिखाई दे, उस अनुसार, उसे 'देखते' रहना है। सिर्फ देखने से ही सभी गांठें विलय हो जाती हैं।

सामायिक में देखने वाली प्रज्ञाशक्ति

प्रश्नकर्ता : अक्रम में यह जो सामायिक करते हैं, उसमें जो पिछले सारे दोष दिखाई देते हैं, तो सामायिक में देखने वाला वह कौन है? आत्मा या प्रज्ञा?

दादाश्री : प्रज्ञा, आत्मा की शक्ति। आत्मा संसार में काम करता है तब तक वह प्रज्ञा कहलाता है। मूल आत्मा खुद नहीं करता है।

प्रश्नकर्ता : आप कई बार सामयिक में बैठाकर त्रिमंत्र बोलने को कहते हैं न, 'पढ़ो, नमो अरिहंताणं करके', तो क्या उस समय आत्मा ही वह पढ़ता है? और जब हम सत्संग की पुस्तक पढ़ते हैं, आप्तवाणी पढ़ते हैं, वह शुद्ध चित्त पढ़ता है और सामायिक में आत्मा पढ़ता है, वह एक समान ही है?

दादाश्री : मूल आत्मा पढ़ता है, वह अलग प्रकार से है। यहाँ पर आत्मा कहने के पीछे हमारा भावार्थ क्या है कि रास्ते पर लाने के लिए कहते हैं। ये इन्द्रियाँ नहीं हैं, ऐसा कहना चाहते हैं। लेकिन यह मूल आत्मा तो, खुद की बुद्धि क्या कर रही है, मन क्या कर रहा है, उन सभी को जानता है। वह भी वास्तव में मूल आत्मा नहीं है, अपनी प्रज्ञा है। वह मूल आत्मा की शक्ति कहलाती है। इसलिए वह सबकुछ जानती है।

'वह (आत्मा) जानता है' वह सही है और यह भी गलत नहीं कहा जाएगा। यहाँ पर इन्द्रियाँ नहीं हैं। उसी प्रकार इसमें मूल आत्मा तो बिल्कुल ही नहीं है। ऐसा तो इस रास्ते पर लाने के लिए कहते हैं, अत: इसे रिलेटिव-रियल कहा जाएगा!

देखने वाले को देखा सामायिक में

सामायिक में देखने वाले को देखा आपने। आत्मा ने, आपने देखने वाले को भी देखा भीतर! वर्ना मनुष्य में इतना याद करने की शक्ति तो होती ही नहीं है न! और यह तो पल-पल का देख लेता है, पल-पल का।

इस संसार में अन्य कोई उपाय नहीं है कि जिससे दो दिन पहले का भी याद आ जाए। यह तो आत्मशक्ति काम कर रही है। अत: आत्मशक्ति की हाज़िरी में प्रज्ञाशक्ति ज़बरदस्त काम कर रही है। प्रज्ञाशक्ति और शुद्ध चित्त दोनों साथ मिलकर ज़बरदस्त काम करते हैं। भीतर कुरेद-कुरेदकर यों सब कहाँ-कहाँ से ढूँढ निकालते हैं! कि खुद को तो याद भी नहीं हो, ऐसे सारे गुनाह! याद नहीं हों वे भी दिखाई देते हैं।

प्रश्नकर्ता : आपने ये जो अभी कहा न कि सामायिक में देखने वाला देखता है, तो यह ज़रा समझ में नहीं आया।

दादाश्री : यह सामायिक तो आत्मसामायिक कहलाती है। आत्मा के अलावा बुद्धि की शक्ति है जो बाहर की चीज़ों को देख सकती है, संसारी चीज़ों को। और इन सभी दोषों को वह (आत्मा) देखता है। अत: यह जानने की शक्ति व देखने की शक्ति आत्मा की है।

आत्मा स्व-पर प्रकाशक है इसलिए वह देख सकता है। खुद को भी देखता है और बाहर जो है, उसे भी देखता है। स्व-पर प्रकाशक अर्थात् संसार को भी प्रकाशमान कर सकता है और खुद को भी प्रकाशमान करता है, दोनों को देख सकता है।

प्रश्नकर्ता : चंदू प्रतिक्रमण करता है और आत्मा उसे देखता है किन्तु आपने तो ऐसा कहा कि देखने वाले को वह देखता है।

दादाश्री : हाँ, मतलब वास्तव में तब मूल आत्मा ही काम कर रहा है। इसलिए हमने यों अलग किया। मूल आत्मा ही काम कर रहा है। जो स्व-पर प्रकाशक है, वही काम कर रहा है। इसीलिए तो उस स्व-पर प्रकाशक का आपको यकीन हो गया कि स्व-पर प्रकाशक भीतर है और कार्य कर रहा है, यह हमने देखा। अब देखने वाला को देखा। देखने वाले को देखते समय अन्य कोई अभ्यास नहीं रहता। लेकिन यहाँ हमें विश्वास हो गया कि यह किसने देखा! अत: हम किसे देखते या ढूँढते हैं? तो यह कि, 'देखने वाले को हमने देखा'।

दादा का निदिध्यासन करवाती है प्रज्ञा

प्रश्नकर्ता : आज सुबह सामायिक में आपका ही निदिध्यासन सारा रहा, वह क्या है? मैं उसे शुद्ध चित्त समझता हूँ।

दादाश्री : नहीं, वह सारा काम तो प्रज्ञाशक्ति का है। शुद्ध चित्त तो वह खुद ही आत्मा है। शुद्धात्मा ही शुद्ध चिद्रूप (चित्त स्वरूप) है। यह सब तो प्रज्ञा करती है।

प्रश्नकर्ता : सभी जगह दादा बैठे हुए दिखाई देते हैं, वह क्या है?

दादाश्री : वही प्रज्ञा है न। अज्ञाशक्ति तो दूसरा ही दिखाती है, लक्ष्मी दिखाती है, स्त्रियाँ दिखाती है, वह अज्ञाशक्ति है। अज्ञाशक्ति स्त्री का निदिध्यासन करवाती है और प्रज्ञाशक्ति ज्ञानी पुरुष का। ज्ञानी पुरुष अर्थात् आत्मा का निदिध्यासन करवाती है।

प्रश्नकर्ता : अब जिसने अभी ज्ञान लिया है, उसे भी स्त्री का निदिध्यासन हो जाता है तो क्या वह अज्ञा डिपार्टमेन्ट है?

दादाश्री : वह तो चंदूभाई का भाग है, उससे हमें क्या लेना-देना?

प्रश्नकर्ता : नहीं, तो फिर उसमें चित्त का फंक्शन कहाँ पर आया?

दादाश्री : वह तो चंदूभाई का भाग है, अशुद्ध चित्त है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर यह प्रज्ञा ज्ञानी पुरुष का जो निदिध्यासन करवाती है, उसमें चित्त का फंक्शन कहाँ आया?

दादाश्री : उसमें चित्त की ज़रूरत ही नहीं है। प्रज्ञाशक्ति खुद ही देख सकती है।

प्रश्नकर्ता : इसे एक्ज़ेक्ट फोटोग्राफी कहते हैं?

दादाश्री : हाँ, एक्ज़ेक्ट! फोटोग्राफी से भी अच्छा। फोटोग्राफी में इतना अच्छा नहीं आता। सपने में तो फोटोग्राफी से भी ज़्यादा अच्छा दिखाई देता है। स्वप्न में तो प्रत्यक्ष देखने से भी ज़्यादा अच्छा आता है।

प्रश्नकर्ता : चित्त का काम ही नहीं रहा।

दादाश्री : शुद्ध चित्त था, वह आत्मा में एक हो गया। आत्मा में मिल गया।

शुद्ध चित्त होने के बाद प्रज्ञा की शुरुआत

प्रश्नकर्ता : तो निदिध्यासन को देखने वाला कौन है?

दादाश्री : वह प्रज्ञाशक्ति है।

प्रश्नकर्ता : वह खुद ही देखती है और खुद ही धारण करती है?

दादाश्री : वह खुद ही है सबकुछ। उसी की हैं सभी क्रियाएँ। चित्त की ज़रूरत ही नहीं रही वहाँ पर। अशुद्ध चित्त है तब तक सबकुछ संसार का ही दिखाई देता है उसे। अशुद्ध चित्त, शुद्ध की बातें नहीं देख सकता। अत: जब चित्त शुद्ध हो जाता है तब आत्मा में एक हो जाता है। आत्मा में मिल जाता है, बचा कौन? बीच में कोई नहीं बचा। प्रज्ञाशक्ति चलती रहती है बस। दखल रहे तो वापस शुद्ध चित्त भी बिगड़ता जाता है। अंधेरा हो न, तो वापस बिगड़ता जाता है, तो उसे वापस कहाँ रिपेयर करवाएँ? उसके कारखाने तो कहीं भी नहीं होते। और प्रज्ञाशक्ति को हमें रिपेयर नहीं करना पड़ता। जो वस्तु नहीं है, अगर उसे रखा जाए तो रिपेयर करवाने जाना पड़ेगा। जो वस्तु नहीं है, उसे तो बिगड़ने पर रिपेयर करवाने जाना पड़ेगा। अत: बीच में किसी चीज़ की कोई ज़रूरत नहीं है। सभी क्रियाएँ प्रज्ञा करती है।

प्रश्नकर्ता : यह चित्त जब शुद्ध हो जाता है, तब प्रज्ञा उत्पन्न होती है न?

दादाश्री : चित्त जब शुद्ध हो जाता है तब शुद्धात्मा में मिल जाता है। उसके बाद प्रज्ञाशक्ति की शुरुआत हो जाती है। शुद्ध चित्त, वही शुद्ध चिद्रूप आत्मा है।

प्रश्नकर्ता : ज्ञानी पुरुष का निदिध्यासन रहता है, उसे आपने प्रज्ञा कहा है, तो आप ऐसा भी कहते हैं न कि जितना अधिक निदिध्यासन रहेगा उतना ही चित्त शुद्ध होगा?

दादाश्री : चित्त शुद्धि तो हो चुकी है न!

प्रश्नकर्ता : जड़ से हो गई है संपूर्ण, तो वह जो अशुद्ध चित्त है, उसका क्या होता है?

दादाश्री : अशुद्ध चित्त तो सभी सांसारिक कार्य कर लेता है। अशुद्ध चित्त हो तो दखल हो जाती है बीच में। शुद्ध चित्त होगा तो दखल

नहीं होगी। यदि तीसरा व्यक्ति होगा तभी दखल होगी। दखल होती है? आप निदिध्यासन करके आओ कभी।

प्रश्नकर्ता : निदिध्यासन करने में किसकी दखल रहती है?

दादाश्री : वे तो ये उदयकर्म हैं।

प्रश्नकर्ता : क्योंकि यदि प्रज्ञा का खुद का स्वतंत्र डिपार्टमेन्ट होता तो प्रज्ञा सभी महात्माओं में उत्पन्न हो चुकी है, उसके बावजूद भी अपने महात्माओं को ज्ञान के बाद में एक सरीखा...

दादाश्री : सभी को एक सरीखा ज्ञान उत्पन्न नहीं होता, हर एक को उसके सामर्थ्य के अनुसार होता है। फिर उसी अनुसार आज्ञा पालन हो पाता है।

प्रश्नकर्ता : यानी आपने सामर्थ्य के अनुसार कहा, ऐसा क्यों?

दादाश्री : ऐसा ही है न! उसका निश्चय बल वगैरह ऐसा सब होना चाहिए न! अलग-अलग नहीं होता हर एक का? हर एक का अलग। तेरा अलग, उसका अलग। सब का अलग-अलग है न!

प्रश्नकर्ता : लेकिन चित्त तो सभी का पूर्णतः शुद्ध हो चुका है, आप ऐसा कहते हो?

दादाश्री : हाँ, तभी तो आत्मा प्राप्त होता है न!

प्रश्नकर्ता : तो शुद्ध चित्त पूर्णतः शुद्ध हुआ उतनी ही प्रज्ञा उत्पन्न होती है?

दादाश्री : हाँ। हम जब ज्ञान देते हैं तब आत्मा शुद्ध हो जाता है इसलिए प्रज्ञा उत्पन्न हो ही जाती है। फिर उसकी पाँच आज्ञा पालन करने की जो शक्ति है न, उसमें जितनी दखलें हो उतना उसका लाभ कम होता जाता है!

प्रश्नकर्ता : अर्थात् जितना आज्ञा का पालन किया जाए उतनी ही प्रज्ञाशक्ति खिलती जाती है?

दादाश्री : हाँ, वैसा निश्चय बल होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : लेकिन इसमें निश्चय बल किसका है?

दादाश्री : सबकुछ खुद का ही।

प्रश्नकर्ता : निश्चय खुद ही करता है और फिर खुद ही बलवान होता जाता है, ऐसा? वह समझ में नहीं आया।

दादाश्री : जब अशुद्ध चित्त और मन वगैरह का ज़ोर रहता है तब निश्चय बल बंद हो जाता है। यह सब (दखलें) जिसमें कम है, उसमें वह (निश्चय बल) ज़्यादा मज़बूत रहता है। दखल करते हैं न ये सब। वर्ना हम भले ही कितने भी एकांत में ध्यान करने बैठे हों लेकिन बाहर लोग हो-हो-हो करें तो? इसी प्रकार ये सब बाहर हो-हो-हो होता है न, तो जिसे ज़्यादा हो-हो-हो होता है, उसका ठिकाना नहीं पड़ता।

प्रश्नकर्ता : यह चीज़ बहुत करेक्ट है। बाहर की हो-हो कम हो जाए तो...

दादाश्री : हमारी यह बाहर की हो-हो नहीं है, तो है क्या कोई झंझट? जबकि आपको तो अगर तीन लोगों की हो-हो रहे तो भी घबराहट हो जाती है। 'मुझे ऐसा कर रहे हैं', मुझे ऐसा सब स्पर्श ही नहीं करता न! मैं इस प्रकार से बैठता हूँ, बाहर बैठता ही नहीं न! मुझे शौक नहीं है ऐसा। आपको अगर शौक है तो बाहर बैठकर तीन लोगों के साथ आप हो-हो करो। मैं तो अपने रूम (आत्मा) में बैठे-बैठे (नाटकीय रूप से) हो-हो करता रहता हूँ। इतने सारे लोग इसका कब अंत आएगा?

प्रश्नकर्ता : आप खुद के रूम में इस तरह सिफत से सरक जाते हैं, चले जाते हैं अंदर।

दादाश्री : बैठा हुआ ही रहता हूँ अंदर। बाहर निकलता ही नहीं हूँ। शायद कभी परछाई दिखाई दी हो तो आपको लगा होगा कि बाहर निकले होंगे, वही भूल है। वास्तव में वह मैं नहीं हूँ।

प्रश्नकर्ता : वह बात सही है। हमारे खींचने पर भी नहीं आते।

निश्चय, प्रज्ञा के

प्रश्नकर्ता : निश्चय कौन करता है? यह फाइल नंबर वन निश्चय करती है?

दादाश्री : आपको ही करना है! आपको खुद को निश्चय करना है।

प्रश्नकर्ता : अर्थात् शुद्धात्मा निश्चय करता है?

दादाश्री : नहीं, नहीं, शुद्धात्मा नहीं, उसकी प्रज्ञाशक्ति। प्रज्ञाशक्ति निश्चय करवाए बगैर रहती ही नहीं। यह तो ज्ञान मिलते ही निश्चय कर ही लेती है।

प्रश्नकर्ता : दादा ऐसा कहते हैं कि 'इसमें तेरे आज्ञा पालन करने की बात नहीं है। तू निश्चय कर कि तुझे आज्ञा में रहना है, बस। बाकी सब मुझ पर छोड़ दे'। आप ऐसा कहते हैं न?

दादाश्री : सिर्फ आज्ञा का पालन ही करना है। आज्ञा के अनुसार हुआ या नहीं, वह आपको नहीं देखना है। पालन करना है, ऐसा तय करो, बस!

प्रश्नकर्ता : अत: यह जो निश्चय करने की बात है, उसमें हम कहते हैं कि तुझे कुछ करना नहीं है। फिर वापस ऐसा भी कहते हैं कि निश्चय कर।

दादाश्री : वे तो शब्द हैं न, यों सिर्फ शब्द ही। ड्रामेटिक शब्द, उसमें कोई कर्ताभाव नहीं है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, यानी वह तो सिर्फ भाषा की बात हुई। लेकिन यह जो निश्चय है, वह निश्चय कौन करता है?

दादाश्री : वह खुद का ही हुआ है। यह जो प्रज्ञाशक्ति है न, वही निश्चय करती है। बस!

प्रश्नकर्ता : लेकिन उसे जब ज्ञान नहीं था, तब अहंकार निश्चय करता था, तब प्रज्ञा नहीं करती थी।

दादाश्री : ठीक है। वह अहंकार नहीं लेकिन अज्ञा करती थी। अब प्रज्ञा कर रही है। अज्ञानी के सभी निश्चय अज्ञा करती है और जिसे यह ज्ञान प्राप्त हुआ है, उसे प्रज्ञा करती है। अज्ञा और प्रज्ञा दो शक्तियाँ हैं। अज्ञा रोंग बिलीफ है और प्रज्ञा राइट बिलीफ है।

प्रश्नकर्ता : वह निश्चय करती है ऐसा कहने के बजाय क्या ऐसा कहना चाहिए कि 'निश्चय रखना' है?

दादाश्री : करना या रखना, जिस भी शब्द से अपना मनचाहा सिद्ध होता है, वही करना है। शब्द चाहे कोई सा भी बोलो, करो या रखो, उससे कोई फर्क नहीं पड़ता है।

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञा निश्चय करती है या करवाती है?

दादाश्री : वह निश्चय करती है, करवाती है, सबकुछ उसी एक में आ जाता है। वह अलग-अलग नहीं है।

प्रश्नकर्ता : तो ऐसा भी कह सकते हैं न कि निश्चय करवाती है, निश्चय रखवाती है?

दादाश्री : हाँ, कहा जा सकता है। कुल मिलाकर वही का वही है। वह एक ही चीज़ है, इसमें हाथ डालने जाएँगे तो पोस्टमॉर्टम हो जाएगा, बेकार ही बिगड़ जाएगा। हम जो कहना चाहते हैं

न, वह आशय खत्म हो जाएगा। इसमें हाथ नहीं डालना है। सीधी-सादी बात समझ लेनी है। भाई, यह प्रज्ञा कर रही है और यह अज्ञा कर रही है, बस। बुद्धि उसमें वापस तरह-तरह की दखलें करती है।

आप 'हमारी' 'पाँच आज्ञा' में रहो, वही पुरुषार्थ है, वही धर्म है! अन्य कोई पुरुषार्थ नहीं है। उसमें सबकुछ आ गया। निश्चय ही पुरुषार्थ है!

प्रज्ञा द्वारा पुरुषार्थ-पराक्रम

प्रश्नकर्ता : पराक्रम और पुरुषार्थ कौन करता है?

दादाश्री : वह सब जो है, वह अपने भीतर है न, वह प्रज्ञा, प्रज्ञा स्वरूप। आत्मा का कुछ भी कर्तापन नहीं होता। प्रज्ञा जो है वह मोक्ष में ले जाती है और अज्ञा जो है वह संसार में भटकाती है।

पुरुषार्थ उदयाधीन नहीं होता। पुरुषार्थ तो जितना करो उतना आपका। हमारे महात्मा पुरुष हो गए, उनके भीतर निरंतर पुरुषार्थ हो रहा है। पुरुष, पुरुष धर्म में आ चुका है और इसीलिए प्रज्ञा चेतावनी देती है!

हम सब के पुरुषार्थ और पराक्रम शुरू हो गए हैं। अब, पुरुषार्थ का यह गुण आत्मा में नहीं है लेकिन जो प्रज्ञा नामक शक्ति है न, यह उसी का धर्म है। अतः आप तय करो कि मुझे इस पुरुषार्थ में रहना है, तो अवश्य वैसा रह पाएगा।

आपको तो तय ही करना है कि 'मुझे पुरुषार्थ ही करना है। मैं पुरुष (आत्मा) हो गया। दादा ने मुझे पुरुष (आत्मा) बनाया है। पुरुष (आत्मा) और प्रकृति दोनों जुदा कर दिए हैं। मैं पुरुष (आत्मा) हुआ हूँ। इसलिए पुरुषार्थ करना है'। ऐसा तय करना।

यह तो पूरे दिन प्रकृति में चला जाता है काफी कुछ तो, ऐसे के ऐसे ही बह जाता है पानी!

प्रकृति की परेशानी के सामने ज्ञान और आज्ञा

प्रश्नकर्ता : मोक्ष अनुभव में आता है, परंतु प्रकृति अपना स्वभाव नहीं छोड़ती। उससे ऊब जाते हैं।

दादाश्री : प्रकृति अपना स्वभाव छोड़ती ही नहीं न! घर के सामने सरकार चारों तरफ गटर खोल दे तो? गटर अपना गुण बताएगा या नहीं?

प्रश्नकर्ता : बताएगा।

दादाश्री : उस घड़ी आपको कौन सी दृष्टि में रहना पड़ेगा?

प्रश्नकर्ता : ज्ञाता-द्रष्टा।

दादाश्री : ऐशो-आराम करने जाएँगे तो हमें गंध आएगी, इसलिए ज्ञाता-द्रष्टा ही रहना। प्रकृति में गटर-वटर आएँ, तब उसमें जाग्रत रहना।

प्रश्नकर्ता : 'हम' 'पड़ोसी' को 'देखते' रहें और उसे सही रास्ते पर नहीं मोड़े तो वह कैसे चलेगा? वह दंभ नहीं कहलाएगा?

दादाश्री : हमें मोड़ने का क्या अधिकार है? दखल नहीं करनी है। उसे कौन चलाता है, वह जानते हो? हम चलाते भी नहीं हैं और हम मोड़ते भी नहीं हैं। वह 'व्यवस्थित' के ताबे में हैं। तो फिर दखल करने से क्या मतलब है? जो हमारा 'धर्म' नहीं है, उसमें दखल करने जाएँ तो परधर्म उत्पन्न होगा!

प्रश्नकर्ता : इस जन्म में ही ज्ञान से हमारा उल्टा आचरण 'स्टॉप' (बंद) हो जाएगा या नहीं?

दादाश्री : हो भी सकता है! 'ज्ञानी पुरुष' के कहे अनुसार करे तो पाँच-दस वर्ष में हो सकता है। अरे, एकाध वर्ष में भी हो सकता है! 'ज्ञानी पुरुष' तो तीन लोक के नाथ कहे जाते हैं। वहाँ पर क्या नहीं हो सकता? कुछ बाकी रहेगा क्या?

इन दादा के पास बैठकर सबकुछ समझ लेना पड़ेगा। सत्संग के लिए टाइम निकालना पड़ेगा।

'अमे केवलज्ञान प्यासी,
दादाने काजे आ भव देशुं अमे ज गाळी...'

– **नवनीत**

इन्हें तृषा किसकी लगी हैं?

'केवलज्ञान की ही तृषा है। हमें अब दूसरी कोई तृषा रही नहीं। तब हम उसे कहें, 'अंदर रही है तृषा, उसकी गहराई से जाँच तो कर'! तब कहता है, 'वह तो प्रकृति में रही है, मुझमें नहीं रही। प्रकृति में तो किसी को चार आना रही होती है, किसी को आठ आना रही होती है, तो किसी को बारह आने रही होती है' तो 'बारह आने वाले को भगवान दंड देते होंगे?' तब कहे, 'नहीं भाई, तुझमें जितनी कमी है, उतनी तू पूरी कर'।

अब जब तक प्रकृति है तब तक उसकी सभी कमियाँ पूरी हो ही जाएँगी। यदि दखल नहीं करोगे तो प्रकृति कमी पूरी कर ही देगी। प्रकृति खुद की कमी खुद पूरी करती है। अब इसमें 'मैं करता हूँ' कहा कि दखल हो जाती है!

'ज्ञान' नहीं लिया हो तो प्रकृति का पूरे दिन उल्टा ही चलता रहता है। और अब तो सीधा ही चलता रहता है। तू सामने वाले को खरी-खोटी सुना दे लेकिन अंदर कहेगा कि, 'नहीं, ऐसा नहीं करना चाहिए। खरी-खोटी सुनाने का विचार आया, उसका प्रतिक्रमण करो'। और ज्ञान से पहले तो सुना देता था और ऊपर से कहता था कि ज़्यादा सुनाने की ज़रूरत है।

यानी अभी जो अंदर चलता रहता है वह समकित बल है, ज़बरदस्त समकित बल है! वह रात-दिन निरंतर काम करता ही रहता है!

प्रश्नकर्ता : वह सब काम प्रज्ञा करती है?

दादाश्री : हाँ, वह काम प्रज्ञा कर रही है। प्रज्ञा मोक्ष ले जाने के लिए, खींच-खींचकर भी मोक्ष में ले जाएगी।

प्रश्नकर्ता : लेकिन दादा, प्रकृति का फोर्स कई बार बहुत आता है?

दादाश्री : वह तो जितनी भारी प्रकृति होगी उतना फोर्स अधिक होगा।

प्रश्नकर्ता : प्रकृति का फोर्स क्यों इतना ज़्यादा होता है कि देखना भी भुला देती है?

दादाश्री : इतनी आत्मा की शक्ति कम है। शक्ति अधिक हो तो भले ही कितने भी फोर्स वाली हो, तब भी वह जुदा हो जाता है।

प्रश्नकर्ता : शक्ति वाला कैसे होना है, वह समझ में नहीं आया?

दादाश्री : आज्ञा का जितना पालन किया जाए, शक्ति उतनी ही बढ़ती जाती है, यानी कि प्रकट होती जाती है। मूल आत्मा की शक्ति सभी में एक सरीखी होती है लेकिन आज्ञा पालन के अनुसार कम या ज़्यादा प्रकट होती है। धीरे-धीरे बढ़ते-बढ़ते अंत तक पहुँचती है।

आज्ञा पालन करवाती है प्रज्ञाशक्ति

प्रश्नकर्ता : पुरुष को क्या पुरुषार्थ करना होता है?

दादाश्री : यह आज्ञारूपी, और कौन सा? आपके लिए आज्ञारूपी, मेरे लिए आज्ञा के बगैर। वही का वही पुरुषार्थ। मेरा आज्ञा के बगैर होता है और आपका आज्ञा से होता है। आखिर में फिर आज्ञा चली जाएगी धीरे-धीरे और उसका मूल रह जाएगा, जैसे-जैसे प्रेक्टिस होगी, वैसे-वैसे।

प्रश्नकर्ता : आज्ञा पालन कौन करता है? प्रतिष्ठित आत्मा पालन करता है?

दादाश्री : प्रतिष्ठित आत्मा को पालन करने का सवाल ही कहाँ है इसमें! आत्मा की प्रज्ञा नामक शक्ति है, वह। तब दूसरा कहाँ रहा फिर! बीच में दखल ही नहीं है न किसी की! इन आज्ञाओं का पालन करना है। अज्ञा शक्ति नहीं करने दे रही थी और प्रज्ञाशक्ति करने देती है। आज्ञा पालन यानी आपकी प्रतीति में है कि 'मैं शुद्धात्मा हूँ' और *लक्ष* में है और अनुभव में कम है परंतु उस रूप हुए नहीं हो अभी। वैसा होने के लिए पाँच आज्ञाओं का पालन करोगे तब उस रूप होंगे।

शुरुआत में घुमाना पड़ेगा हैन्डल

प्रश्नकर्ता : आज्ञाएँ ध्यान में हैं लेकिन जिस सहज भाव से रहनी चाहिए वैसे नहीं रहतीं, उसके लिए क्या?

दादाश्री : आपको उस पर ध्यान देने की ज़रूरत है। बाकी, सहज भाव से नहीं हो सके, इतनी कठिन नहीं है। सब से आसान चीज़ है, परंतु आदत डालनी चाहिए। पहले उसका अभ्यास करना पड़ेगा। अन्अभ्यास है! अन्अभ्यास मतलब हमें रियल और रिलेटिव देखने का अभ्यास ही नहीं है न! इसलिए एक महीना आप अभ्यास करो फिर सहज हो जाएगा। मतलब पहले हैन्डल घुमाना पड़ेगा। यह रियल और यह रिलेटिव, बहुत जागृति वाला नहीं घुमाएगा तो चलेगा। लेकिन इन लोगों में इतनी अधिक जागृति होती नहीं है न! बहुत जागृति वालों को तो कुछ भी नहीं करना है। हैन्डल घुमाने की भी ज़रूरत नहीं है। यह तो, सब सहज ही रहता है।

अब आपको यह जागृति निरंतर रहेगी। आपके पापों को भस्मीभूत कर दिया है। इसलिए यह शुद्धात्मा का *लक्ष* (जागृति) निरंतर रहा करेगा, क्षण भर के लिए भी चूके बगैर। सिर्फ हमारी आज्ञा का पालन करना है। इसलिए ये पहली दो आज्ञाएँ दी हैं, फर्स्ट रिलेटिव व्यू पोइन्ट, सेकन्ड रियल व्यू पोइन्ट। तो सुबह जब बाहर जाओ, तो इन दोनों व्यू पोइन्ट से देखते-देखते जाओ तो कोई आपत्ति उठाएगा? गाय को भी देखना है और अंदर शुद्धात्मा को देखना है। ऐसे देखते-देखते एक घंटा तक देखना है।

रियल अविनाशी, रिलेटिव विनाशी

एक विनाशी दृष्टि है और एक अविनाशी दृष्टि है, दो तरह की दृष्टियाँ हैं। वास्तव में खुद की मूल दृष्टि तो अविनाशी है लेकिन फिर इस विनाशी में दृष्टि डाली। उससे अपना उल्टा विनाशी भाव उत्पन्न हुआ!

'मैं चंदूलाल हूँ' ऐसा भान, लोगों ने कहा और हम उसे मानकर ऐसे फँस गए और दृष्टि 'रिलेटिव' हो गई। अतः, 'विनाशी हूँ', ऐसा भान हुआ। लेकिन फिर अंदर खटकता रहता है कि पिछले जन्म में था। फिर कहता भी है ऐसा। यदि पिछले जन्म में था, तो अविनाशी है ही न! हम पिछले जन्म में थे, तो हम विनाशी नहीं है। यह तो, देह विनाशी है। हमारा अविनाशीपन तो है ही। क्योंकि हम शुद्धात्मा हैं, वह 'रियल' वस्तु है। और जितनी 'रियल' वस्तुएँ हैं, वे सभी अविनाशी हैं। जितनी 'रिलेटिव' वस्तुएँ हैं, वे विनाशी हैं।

प्रश्नकर्ता : कई बार हम संसार की कुछ बातों में, यह रिलेटिव है, इस तरह से औपचारिक रहते हैं, तो अंदर बहुत आनंद रहता है।

दादाश्री : रिलेटिव कहा, तभी से आनंद। रिलेटिव कहा तो खुद रियल है, उस बात का विश्वास हो गया। 'मैं शुद्धात्मा' नहीं कहा और यह सब रिलेटिव है, ऐसा कहा न, कि यह सब रिलेटिव है, तो आप शुद्धात्मा हो, वह प्रूव (साबित) हो जाता है।

रियल और रिलेटिव को अलग करे, वह है प्रज्ञा

प्रश्नकर्ता : रियल-रिलेटिव बाहर देखते-

देखते जाऊँ, तो फिर वह कौन देखता है? शुद्धात्मा देखता है?

दादाश्री : वह तो प्रज्ञा देखती है, आत्मा नहीं देखता। और प्रज्ञा देखती है इसलिए आत्मा के खाते में ही गया। बुद्धि और प्रज्ञा, दोनों के देखने-जानने में फर्क है। वह इन्द्रियगम्य है और यह अतीन्द्रियगम्य है।

प्रश्नकर्ता : रियल और रिलेटिव को अलग कौन रखता है?

दादाश्री : सारा विनाशी तो हम पहचान सकते हैं न! मन-वचन-काया से, यह सब जो आँखों से दिखाई देता है, कानों से सुनाई देता है, वह सब रिलेटिव ही है। जबकि रियल का अर्थ है अविनाशी। अंदर प्रज्ञाशक्ति है, वह दोनों को अलग रखती है। रिलेटिव का भी अलग रखती है और रियल का भी अलग रखती है।

प्रश्नकर्ता : तो फिर दादा ऐसा हुआ न कि रियल, रिलेटिव और प्रज्ञा, ये तीन चीज़ें हैं? प्रज्ञा रियल से अलग चीज़ है?

दादाश्री : प्रज्ञा रियल की ही शक्ति है लेकिन बाहर निकली हुई शक्ति है। जब रिलेटिव नहीं रहता, तब वह आत्मा में एकाकार हो जाती है।

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञा रिलेटिव है या रियल है?

दादाश्री : 'रिलेटिव रियल' है। जब उसका काम पूरा हो जाता है तो मूल जगह पर बैठ जाती है, वापस आत्मा में विलय हो जाती है। प्रज्ञा 'रिलेटिव रियल' है। रियल होती तो अविनाशी कहलाती।

प्रश्नकर्ता : वह 'रिलेटिव-रियल' फिर 'रियल' हो जाती है, तब रिलेटिव नहीं रहता न?

दादाश्री : रियल में रिलेटिव नहीं होता। रिलेटिव मात्र विनाशी है। अत: यह प्रज्ञा (आत्मज्ञान होने पर उत्पन्न होती है और केवलज्ञान होने पर पूर्ण हो जाती है) विनाशी है लेकिन रियल है इसलिए वापस खुद के स्वभाव में आ जाती है। उसका संपूर्ण नाश नहीं होता।

प्रश्नकर्ता : रिलेटिव भाग पर प्रज्ञा का कंट्रोल है?

दादाश्री : किसी का भी कंट्रोल नहीं है। बल्कि रिलेटिव का रियल पर कंट्रोल था। इसलिए शोर मचाते थे कि, 'हम बंधे हुए हैं, हम बंधे हुए हैं, हमें मुक्त करो, मुक्त करो'। जब ज्ञानी पुरुष मुक्त कर देते हैं, तब चैन की साँस लेता है कि, 'ओह! अब मुक्त हो गए'।

आज्ञा चूके वहाँ सवार हो जाती है प्रकृति

प्रश्नकर्ता : जो आपके पास आया, ज्ञान लिया, उसे निराकुलता तो उत्पन्न हो ही जाती है। फिर यदि वह आज्ञा में रहे तब भी और न रहे, फिर भी उसकी इतनी मस्ती रहती है!

दादाश्री : लेकिन, जो आज्ञा में नहीं रहता न, उस पर फिर धीरे-धीरे प्रकृति सवार हो जाती है।

प्रश्नकर्ता : हाँ, बस, यही पोइन्ट चाहिए।

दादाश्री : प्रकृति सवार हो जाती है। आज्ञा में रहे तो फिर कोई उसका नाम नहीं लेगा। आज्ञा में नहीं रहे तो प्रकृति खा जाती है। दादा की कृपा से उस घड़ी शांति रहती है, बाकी सब रहता है, दो-दो साल, पाँच-पाँच साल तक रहता है। लेकिन उसका कोई अर्थ नहीं है, खा जाती है प्रकृति।

प्रश्नकर्ता : प्रकृति खा जाती है यानी? प्रकृति सवार हो जाती है यानी?

दादाश्री : प्रकृति अपने जैसा बना देती

है। वह भी फिर मार-पीटकर। और आज्ञाएँ बहुत आसान हैं, कोई कठिन नहीं हैं। हमने फिर सारी छूट दे रखी है। आज्ञा पालन करके फिर आराम से जलेबी और पकौड़े दोनों खाना। इससे ज़्यादा और क्या चाहिए? जो भाये सो खाने की छूट दी है। यदि वहाँ बंधन रखा होता तो, हर बात में आपको ज्ञानी का बंधन कैसे पुसाएगा? लेकिन सीधी-सरल आज्ञाएँ हैं। जैसा है वैसा देखना है, क्या हर्ज है?

प्रश्नकर्ता : देखने में हर्ज नहीं है लेकिन देख नहीं पाते न!

दादाश्री : पाँचों इन्द्रियों के सभी घोड़े यदि खुद चला रहा हो, तो खुद को लगाम खींचनी पड़ेगी और ऐसे ज़रा खींचनी और ढील देनी पड़ेगी। उसके बजाय मैंने कहा, 'छोड़ दे न, भाई। घोड़े इतने सयाने हैं कि वे घर ही ले जाएँगे और भाई, तू उल्टा उन घोड़ों का खून निकाल रहा है'।

आज्ञा, वहाँ संयम और समाधि

प्रश्नकर्ता : आज्ञा चूक गए हैं, उसका कोई थर्मामीटर है?

दादाश्री : भीतर सफोकेशन, भुगतना आदि सब होता है। वह आज्ञा चूकने का ही परिणाम है। आज्ञा वालों को तो समाधि ही रहती है, निरंतर। जब तक आज्ञा हैं, तब तक समाधि। अपने मार्ग में कई ऐसे लोग हैं जो अच्छी तरह से आज्ञा पालन करते हैं और समाधि में रहते हैं। क्योंकि ऐसा सरल और समभावी मार्ग, सहज जैसा! और यदि यह अनुकूल नहीं है तो फिर वह (क्रमिक) तो अनुकूल रहेगा ही कैसे? यानी झंझटों को दूर रखकर, मन की झंझटों पर ध्यान ही नहीं देना चाहिए। सिर्फ ज्ञाता-ज्ञेय का संबंध ही रखो। मन अपने धर्म में है, उसमें क्यों दखल देने की ज़रूरत है? निरंतर आज्ञा में रह पाएँ, समाधि में रह पाएँ ऐसा मार्ग है। ज़रा भी कठिन नहीं। आम आदि खाने की छूट।

प्रश्नकर्ता : ज्ञानी के आश्रय में आने के बाद जो भी कमी पता चलती है तो वह खुद की समझनी चाहिए या सामने वाले की? हमें तो ऐसा लगता है कि हम आज्ञानुसार रहते हैं, लेकिन उसमें किस तरह का फर्क रह जाता है?

दादाश्री : फर्क रह जाता है न! इसलिए फिर हम पर सारी *उपाधि* (मुसीबतें) आती रहती है। हमें अरुचि होती है, ऊब आती है, ऐसा सब होता है। फर्क रह जाने पर ऐसा हो जाता है, वर्ना यदि हमारी आज्ञा में रहे न, तो फिर समाधि जाती नहीं। इस ज्ञान का ऐसा प्रताप है कि अखंड शांति रहती है और एक-दो जन्मों में मुक्ति मिल जाती है और अंदर निरंतर संयम रहता है, आंतरिक संयम। बाह्य संयम नहीं। बाह्य संयम तो, यह जो दिखाई देता है, वह बाह्य संयम कहा जाता है। लेकिन अंदर का संयम, किसी का अहित नहीं हो। खुद को गाली दे फिर भी उसका अहित न करे। क्रोध-मान-माया-लोभ नहीं हों, ऐसा आंतरिक संयम रहता है। इस ज्ञान का प्रताप! और भूलचूक हो तो सुधार लेता है।

प्रश्नकर्ता : दादा, आपकी जो पाँच आज्ञा हैं, उनका पालन करना थोड़ा मुश्किल है या नहीं?

दादाश्री : मुश्किल इसलिए है कि अपने जो पिछले कर्म हैं, वे परेशान करते रहते हैं। पिछले कर्मों की वजह से आज खीर खाने को मिली। अब खीर ज़्यादा खा ली, उसकी वजह से डोज़िंग हो गया इसलिए आज्ञा का पालन नहीं हो पाया। अब यह अक्रम है। क्रमिक मार्ग में तो क्या करते हैं कि खुद सभी कर्मों को खपाते-खपाते आगे बढ़ते हैं। खुद कर्म को खपाकर, अनुभव लेकर और भुगतकर फिर आगे बढ़ते हैं। जबकि यह कर्म को खपाए बगैर की बात है। इसलिए हम ऐसा कहते हैं कि 'भाई, इन आज्ञा में रहो और

यदि नहीं रह पाए तो चार जन्म ज़्यादा लगेंगे, उसमें क्या नुकसान होने वाला है?

प्रज्ञा में किस प्रकार से रहें तन्मय?

प्रश्नकर्ता : 'यह भरोसे वाली और यह बिना भरोसे की पूँजी है', ऐसा ध्यान रखने वाला कौन है?

दादाश्री : यह सारा प्रज्ञाशक्ति का ही काम है। लेकिन जब प्रज्ञाशक्ति अपना काम नहीं संभालती, तब 'डिस्चार्ज' अहंकार सारा काम करता रहता है। वह जब ऐसा करे तब हमें उसे देखना है कि किसमें तन्मयाकार है! इसमें, प्रज्ञा में तन्मयाकार रहना चाहिए, उसके बजाय उसमें तन्मयाकार, स्लिप हो जाता है। ऐसी जागृति रहेगी तो प्रज्ञा में रह पाएगा। अगर उसमें चला जाएगा तो अजागृति रहेगी।

प्रश्नकर्ता : आपने जो ज्ञान दिया है तो उसे जागृति में तो रहना ही है।

दादाश्री : उसकी इच्छा तो है लेकिन रह नहीं पाता। आदत पड़ी हुई है न! पिछली आदत पड़ी हुई है इसलिए फिर उस तरफ चला जाता है। लेकिन जिसका भाव स्ट्रोंग है, वह तो गए हुए को भी वापस बुला लेता है कि अरे! नहीं जाना है। पता तो चलता है न खुद को?

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञा में तन्मयाकार रहने को कहा है, तो वह ज़रा ठीक से स्पष्ट करके समझाइए।

दादाश्री : सिन्सियर रहना है। किसके प्रति सिन्सियर है? अब आपको अगर मोक्ष में जाना है तो प्रज्ञा के प्रति सिन्सियर रहो और यदि मौज-मज़े उड़ाने हैं तो कुछ देर के लिए उस तरफ चले जाओ। अभी अगर कर्म के उदय ले जाते हैं तो वह अलग बात है। कर्म का उदय घसीटकर ले जाए तो भी हमें इस तरफ का रखना है। नदी उस तरफ खींचेंगी लेकिन हमें तो किनारे पर जाने के लिए ज़ोर लगाना है। नहीं लगाना चाहिए? या फिर जैसे वह खींचे वैसे खिंच जाना है?

प्रश्नकर्ता : अर्थात् यदि उसका निश्चय पक्का होगा, तभी सिन्सियर रहेगा न?

दादाश्री : पक्का होगा तभी रह पाएगा न! नहीं तो फिर जिसका निश्चय ही नहीं है, उसका क्या फिर? नदी जिस तरफ खींचेगी उसी तरफ चला जाएगा। किनारा तो न जाने कहाँ रह गया! हमें तो किनारे की ओर जाने के लिए ज़ोर लगाना चाहिए। नदी उस ओर खींचेगी। पर हमें इस तरफ आने के लिए हाथ-पैर मारने चाहिए। थोड़ा बहुत, जितना खिसक पाए, उतना ठीक है। तब तक तो अंदर ज़मीन में आ जाएगा।

अर्थात् इस विज्ञान से, मोक्ष के लिए उसे सावधान करने वाली प्रज्ञाशक्ति उत्पन्न हो जाती है। उसके बाद उसे खुद पॉज़िटिव रहना चाहिए। नेगेटिव सेन्स नहीं रखना चाहिए। पॉज़िटिव अर्थात् उसमें अपनी खुशी होनी चाहिए और पॉज़िटिव सेन्स रखते भी हैं सभी और फिर इस संसार की कोई अड़चन भी स्पर्श नहीं होने देते। यदि वह खुद ठीक तरह से रहे न, तो संसार की कोई अड़चन स्पर्श नहीं होने देता अंदर ऐसा आयोजन हो जाता है। क्योंकि जब आत्मा प्राप्त नहीं हुआ था अर्थात् भगवान प्राप्त नहीं हुए थे, तब भी संसार चल ही रहा था तो क्या प्राप्त होने के बाद वह बिगड़ जाएगा? तब कहते हैं, नहीं बिगड़ेगा।

दादा की कृपा कैसे उतरती है?

प्रश्नकर्ता : निश्चय किया हो कि दादा के पास रहकर काम निकाल लेना है। पाँच आज्ञाओं में रहना है, फिर भी उसमें कमज़ोर पड़ जाएँ, तो उसके लिए क्या करना चाहिए?

दादाश्री : ले! क्या करना चाहिए मतलब? मन कहे कि 'ऐसा करो' तो समझ लो कि यह

तो बल्कि हमारे ध्येय से बाहर है। दादाजी की कृपा कम हो जाएगी। इसलिए मन से कह देना कि, 'नहीं, यह ऐसे करना है, ध्येय के अनुसार'। दादाजी की कृपा कैसे उतरती है, ऐसा जान लेने के बाद अपना आयोजन होना चाहिए।

यानी मन के कहे अनुसार चलने से, यह सारी झंझट होती है। कई बार कहा है ऐसा, यही समझाता रहता हूँ। यानी मन के कहे अनुसार नहीं चलना है। हमारे ध्येय के अनुसार ही जाना चाहिए। वर्ना वह तो, किस गाँव जाना हो, उसके बजाय न जाने किस गाँव ले जाएगा! ध्येय अनुसार चलना, उसी को पुरुषार्थ कहते हैं न! मन के कहे अनुसार ये तो अंग्रेज-वंग्रेज सभी चलते ही हैं न! इन सब फॉरेनर्स का मन कैसा होता है? सहज स्थिति में होता है और हमारा दखल करने वाला मन। कुछ न कुछ उल्टा होता है। अत: हमें तो अपने मन का खुद ही स्वामी बनना पड़ेगा। अपना मन अपने कहे अनुसार चले, ऐसा होना चाहिए।

प्रश्नकर्ता : ऐसी बात निकले न, तो पंद्रह-बीस दिन इस अनुसार चलता है। फिर कुछ ऐसा हो जाता है न, तो फिर से पलट जाता है।

दादाश्री : पलट जाता है लेकिन वह तो मन पलट जाता है। आप क्यों पलटने लगे? आप तो वही के वही हो न!

प्रश्नकर्ता : ये आज्ञाएँ भी कई बार सहज हो जाती हैं।

दादाश्री : धीरे-धीरे सभी सहज हो जाएँगी। जिसे पालन करना है, उनके लिए सहज हो जाती है। यानी कि खुद का मन ही वैसा अभ्यस्त हो जाता है। जिसे पालन करना है और निश्चय है, उन्हें कोई मुश्किल है ही नहीं। यह तो उच्चतम, बहुत अच्छा विज्ञान है और निरंतर समाधि रहती है। गालियाँ दे तो भी समाधि नहीं जाती, घाटा होने पर भी समाधि नहीं जाती, घर जलता दिखाई दे तब भी समाधि नहीं जाती।

प्रश्नकर्ता : प्रज्ञाशक्ति का इतना विकास होता है कि सभी आज्ञाएँ अंदर आ ही जाती हैं?

दादाश्री : आ जाती हैं। प्रज्ञाशक्ति पकड़ ही लेती है। यह तो, आपको जो आज्ञा का पालन करना है, वह आपका जो प्रज्ञा स्वभाव है, वही आपसे सबकुछ करवाता है।

अत: आज्ञा ही धर्म और आज्ञा ही तप। जब तक तप है, तब तक प्रज्ञा है। तब तक मूल स्वरूप नहीं है। आत्मा में वह तप नामक गुण है ही नहीं, प्रज्ञा तप करवाती है। ये पाँच आज्ञाएँ, ये जो पाँच फन्डामेन्टल सेन्टेन्स हैं न, वे पूरे वर्ल्ड के सभी शास्त्रों का अर्क ही है सारा!

प्रश्नकर्ता : दादा, जब आपके पास आते हैं तब कई बार आप ऐसा कहते हैं कि, 'अपना काम निकाल लो, अपना काम निकाल लो'। तो हमें अपना काम कैसे निकाल लेना है?

दादाश्री : काम निकाल लो अर्थात् क्या कहना चाहते हैं हम? हम ऐसा नहीं कहते कि आप आज्ञा का पूरा पालन करो। मैं रोज़ ऐसा नहीं गाता रहता। लेकिन काम निकाल लो यानी आापको समझ लेना है कि, 'हमें और ज़्यादा आज्ञा पालन करने को कह रहे हैं, आज्ञा में जाग्रत रहने को कह रहे हैं'। यानी जाग्रत रहो आज्ञा में, मैं ऐसा कहना चाहता हूँ। तो आपका काम निकल गया। परीक्षा में प्रोफेसर क्या कहते हैं कि 'भाई, परीक्षा ऐसी दो कि मार्क बढ़ाने नहीं पड़े, किसी को आजिज़ी नहीं करनी पड़े। इस तरह से परीक्षा दो'। अत: उसे समझ लेना चाहिए कि, ज़्यादा पढ़ना है। सब सही तरीके से होना चाहिए, ऐसा कहना चाहता हूँ मैं, काम निकाल लो, उस पर से!

जय सच्चिदानंद

आत्मज्ञानी पूज्य दीपकभाई के सानिध्य में सत्संग कार्यक्रम

अडालज

12 नवम्बर – रात 8-30 से 10-30 **दिपावली के अवसर पर विशेष भक्ति**

14 नवम्बर – **नूतन वर्ष (वि. सं. 2080) के अवसर पर त्रिमंदिर में अन्नकूट-पूजन-आरती और पूज्यश्री के दर्शन**

23 से 30 दिसम्बर – **आप्तवाणी 14 भाग-3 पर सत्संग पारायण** (हिन्दी-अंग्रेजी में ट्रान्सलेशन उपलब्ध रहेगा।)

31 दिसम्बर – **श्री सीमंधर स्वामी की छोटी प्रतिमाओं की प्राणप्रतिष्ठा**

अमरेली में परम पूज्य दादा भगवान का 116वाँ जन्मजयंती महोत्सव

22 नवम्बर (बुध)	शाम 7 से 10	– **महोत्सव शुभारंभ (सांस्कृतिक कार्यक्रम)** और **सत्संग**
23-24 नवम्बर (गुरु-शुक्र)	सुबह 10 से 12-30	– **सत्संग**
	शाम 4-30 से 7	– **सत्संग**
25 नवम्बर (शनि)	सुबह 10 से 12-30	– **सत्संग**
	शाम 3-30 से 7	– **ज्ञानविधि**
26 नवम्बर (रवि)	सुबह 8 से 1	– **जन्मजयंती के अवसर पर पूजन-दर्शन-भक्ति**
	शाम 5 से 8	– **जन्मजयंती के अवसर पर दर्शन**

स्थल : लीलीया रोड़, त्रिमंदिर के पास, दादानगर ग्राउन्ड, अमरेली. **संपर्क :** 9574329133

पूज्य नीरूमाँ / पूज्य दीपकभाई को देखिए टी.वी. चैनल पर...

भारत

- **'साधना'** पर हर रोज़ सुबह 7-50 से 8-15 तथा रात 9-30 से 9-55 (हिन्दी में)
- **'दूरदर्शन उत्तरप्रदेश'** पर हर रोज़ दोपहर 3 से 4 (हिन्दी में)
- **'आस्था'** पर हर रोज़ रात 10 से 10-20 (हिन्दी में)
- **'धर्म संदेश'** चैनल पर हर रोज़ सुबह 2-50 से 3-50, दोपहर 2-30 से 3 तथा रात 8 से 9
- **'दूरदर्शन सह्याद्रि'** पर हर रोज़ सुबह 7 से 7-45 (मराठी में)
- **'दूरदर्शन सह्याद्रि'** पर हर रोज़ दोपहर 3-30 से 4 सोम से शुक्र और 11-30 से 12 शनि-रवि (मराठी में)
- **'आस्था कन्नड़ा'** पर हर रोज़ दोपहर 12 से 12-30 तथा शाम 4-30 से 5 (कन्नड़ा में)
- **'दूरदर्शन चंदना'** पर हर रोज़ शाम 6-30 से 7 (कन्नड़ा में)
- **'दूरदर्शन गिरनार'** पर रोज़ सुबह 7-30 से 8-30, रात 9 से 10
- **'वालम'** पर हर रोज़ शाम 6 से 6-30 (सिर्फ गुजरात राज्य में)

त्रिमंदिरो के संपर्क : अडालज : 9328661166-77, **राजकोट :** 9924343478, **भूज :** 9924345588, **मुंबई :** 9323528901, **अंजार :** 9924346622, **मोरबी :** 9924341188, **सुरेन्द्रनगर :** 9737048322, **अमरेली :** 9924344460, **वडोदरा :** 9574001557, **गोधरा :** 9723707738, **जामनगर : 9924343687. अन्य सेन्टरों के संपर्क : अहमदाबाद (दादा दर्शन) :** 9574001445, **वडोदरा (दादा मंदिर) :** 9924343335, **दिल्ली :** 9810098564, **बैंगलूर :** 9590979099, **कोलकता :** 9830080820 **यु.एस.ए.-केनेडा:** +1 877-505-3232, **यु.के.:** +44 330-111-3232, **ऑस्ट्रेलिया:** +61 402179706

दिल्ली : सत्संग - ज्ञानविधि : ता. 26-28 अगस्त 2023

अडालज : रक्षाबंधन का उत्सव : ता. 30 अगस्त 2023

अडालज : जन्माष्टमी का उत्सव : ता. 7 सितम्बर 2023

अक्तूबर 2023
वर्ष-18 अंक-12
अखंड क्रमांक - 216

दादावाणी

Date Of Publication On 15th Of Every Month
RNI No. GUJHIN/2005/17258
Reg. No. G-GNR-348/2021-2023
Valid up to 31-12-2023
LPWP Licence No. PMG/NG/036/2021-2023
Valid up to 31-12-2023
Posted at Adalaj Post Office
on 15th of every month.

प्रज्ञा अंदर का भी कार्य करती है और बाहर का भी कार्य करती है

प्रज्ञा, वह आत्मा का डिरेक्ट प्रकाश है, जबकि बुद्धि वह इन्डिरेक्ट प्रकाश है, मिडियम थ्रु आने वाला प्रकाश है। केवलज्ञान के अंश स्वरूप के भाग को हम 'प्रज्ञा' कहते हैं। प्रज्ञा वह ज्ञान पर्याय है। जैसे-जैसे आवरण टूटते जाते हैं, वैसे-वैसे प्रकाश बढ़ता जाता है और उतना ही अंशत: केवलज्ञान बढ़ता जाता है। संपूर्ण केवलज्ञान तो 360 अंश पूरे हो जाएँ, तब होता है। प्रज्ञा वह तो 'पति ही परमेश्वर' ऐसा मानने वाली वफादार पत्नी का कार्य करती है। आत्मा के संपूर्ण हित को ही दिखाती है और अहित को छुड़वाती है। जितने-जितने बाह्य संयोग आएँ, उनका समभाव से निकाल कर देती है और फिर अपने स्वरूप के ध्यान में बैठ जाती है। अत: अंदर का भी कार्य करती है और बाहर का भी कार्य करती है, 'इन्ट्रिम गवर्नमेन्ट' की तरह। और वह भी तभी तक, जब तक कि फुल्ली इन्डिपेन्डेन्ट गवर्नमेन्ट स्थापित नहीं हो जाती।

- दादाश्री

Printed and Published by Dimple Mehta on behalf of Mahavideh Foundation - Owner.
Printed at Amba Multiprint, Opp. H B Kapadiya New High School, Chhatral - Pratappura Road,
At - Chhatral, Tal : Kalol, Dist. Gandhinagar – 382729.